'प्राथमिक शिक्षक' राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक त्रैमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है, शिक्षकों और संबद्ध प्रशासकों तक केंद्रीय सरकार की शिक्षा नीतियों से संबंधित जानकारियाँ पहुँचाना, उन्हें कक्षा में प्रयोग में लाई जा सकने वाली सार्थक और संबद्ध सामग्री प्रदान करना और देशभर के विभिन्न केंद्रों में चल रहे पाठ्यक्रमों और कार्यक्रमों आदि के बारे में समय पर अवगत कराते रहना। शिक्षा जगत् में होने वाली गतिविधियों पर विचारों के आदान-प्रदान के लिए भी यह पत्रिका एक मंच प्रदान करती है।

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त किए गए विचार लेखकों के अपने होते हैं। अत: यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक चिंतन में परिषद् की नीतियों को ही प्रस्तुत किया गया हो। इसलिए परिषद् का कोई उत्तरदायित्व नहीं है।

अकादमिक संपादक
लता पाण्डे
अकादमिक संपादकीय मंडल
इंदु कुमार
रमेश कुमार

श्वेता उप्पल — *मुख्य संपादक*
रेखा अग्रवाल — *संपादक*
राजेन्द्र चौहान — *सहायक उत्पादन अधिकारी*

आवरण
सीमा पाल

चित्र
गोईंग टू स्कूल इंडिया, नयी दिल्ली से साभार

मूल्य एक प्रति : 65 रुपए वार्षिक : 260 रुपए

प्राथमिक शिक्षक

अप्रैल 2010

शैक्षिक संवाद की पत्रिका

विशेष - बालिका शिक्षा विशेषांक

प्राथमिक शिक्षक

वर्ष: 34 अंक 2 अप्रैल 2010

इस अंक में

संवाद 3

लेख

1. शिक्षा के साथ आज़ादी – करें सपने साकार बच्चियों के — किरण देवेंद्र 5
2. मुनिया से स्कूल इतना दूर क्यों? — शारदा कुमारी 8
3. रिमझिम शृंखला और लैंगिक समानता — लता पाण्डे 15
4. शिक्षण और पाठ्यसामग्री में लैंगिक संवेदनशीलता और शांति का विस्तृत अध्ययन – मालद्वीप के विशेष संदर्भ में — गौरी श्रीवास्तव 19
5. उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जिले में स्थित कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय – एक तुलनात्मक अध्ययन — मोना यादव 25
6. सामाजिक रूढ़ियाँ नारी शिक्षा में बाधक — प्रेम कपाड़िया 37
7. भारत में महिला शिक्षा — म. वि. कुबड़े 43
8. झारखंड में आदिवासी लड़कियों की शिक्षा — आशारानी व्होरा 46
9. उत्तर प्रदेश में कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों को क्रमोन्नत करने के प्रस्ताव की सार्थकता — रश्मि श्रीवास्तव 50

10. लैंगिक संवेदनशीलता की दृष्टि से भोपाल के सहशिक्षा मदरसों का शोध अध्ययन — सुषमा जयरथ, ख़दीजा सिद्दीकी — 54

शोध

11. बालिका शिक्षा की स्थिति और विकास में समुदाय की सहभागिता का अध्ययन — राजकुमार चावड़ा — 64

पठनीय

12. बालिका शिक्षा — शबनम सैयदा — 74

प्राथमिक शिक्षक पत्रिका के बारे में — 82

बालमन कुछ कहता है

13. मुझे स्कूल जाना पसंद है — अरुन पहाड़िया — 83

14. मेरा सपना — जतिन राजौरा — 84

कविता

15. अब तो मुझे भी पढ़ने दो... — लक्ष्मी रानी 'चंदेल'

संवाद

बेटियाँ, शुभकामनाएँ हैं।
बेटियाँ, पावन दुआएँ हैं।
बेटियाँ, जीनत हदीसों की,
बेटियाँ, जातक कथाएँ हैं।
बेटियाँ, गुरु ग्रंथ की वाणी,
बेटियाँ, वैदिक ऋचाएँ हैं।
जिनमें खुद भगवान बसता है,
बेटियाँ, वे वंदनाएँ हैं।
त्याग, तप, गुण, धर्म, साहस की,
बेटियाँ, गौरव कथाएँ हैं।
मुस्करा के पीर पीती हैं,
बेटियाँ, हर्षित व्यथाएँ हैं।
लू-लपट को दूर करती हैं
बेटियाँ, जल की घटाएँ हैं।
इस प्रदूषण के ज़माने में,
बेटियाँ, सुरभित फिज़ाएँ हैं।
दुर्दिनों के दौर में देखा,
बेटियाँ, संवेदनाएँ हैं।

बहुत पहले अज़हर हाशमी की यह कविता 'दैनिक भास्कर' में पढ़ी थी। कविता ने मन को कहीं भीतर तक स्पर्श कर दिया था। कविता पढ़ने के बाद मन ही नहीं पलकें भी नम हो आईं थीं। बेटियाँ घर-परिवार ही नहीं समाज के लिए भी हमेशा से ही बहुत कुछ करती आई हैं। इतिहास गवाह है कि आज़ादी की लड़ाई में महिलाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया, लेकिन आज़ादी के इतने दशक बीतने के बाद आज भी हमारे समाज में बेटियों को वह दर्ज़ा हासिल नहीं है, जो कि बेटों को। भले ही हमारे देश की बालिकाओं ने, जब भी उन्हें अवसर मिला, ऊँचे-से-ऊँचे मुकाम को हासिल किया। लेकिन उन्हें अभी भी अपेक्षित स्थान नहीं मिला है। आज भी आए दिन समाचार-पत्र, टेलिविज़न के विभिन्न चैनल्स में भ्रूण हत्या, दहेज हत्या, यौन उत्पीड़न जैसी खबरें किसी भी संवेदनशील हृदय को झकझोर कर रख देती हैं। कारण स्पष्ट हैं कि आज भी बहुत से लोग लिंगजनित रुढ़िग्रस्त मानसिकता से ग्रस्त हैं। जब तक स्वस्थ मानसिक दृष्टिकोण विकसित नहीं होगा, तब तक समाज में बेटियाँ अजन्मी रहेंगी, जन्म ले भी लिया तो कदम-कदम पर दोगले व्यवहार की पीड़ा का सामना करती रहेंगी।

बचपन से ही लिंग आधारित स्वस्थ दृष्टिकोण के विकास में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए हमारी पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों में लिंगजनित सार्थक दृष्टिकोण के विकास हेतु ज़रूरी सामग्री के विकास पर निरंतर बल दिया जा रहा है।

भले ही, कितनी ही विषयसामग्री का विकास हो जाए, शिक्षकों का रवैया सकारात्मक होना भी ज़रूरी है। शिक्षक का सकारात्मक दृष्टिकोण ही बच्चों में अपेक्षित बदलाव ला सकता है। शिक्षक ही है जो कक्षा के भीतर और बाहर विभिन्न क्रियाकलापों के माध्यम से नन्हे बच्चों में लिंग आधारित समतावादी दृष्टिकोण के बीज अंकुरित कर सकता है। यह ज़रूरी है कि इस संबंध में हमारे सभी शिक्षक साथी अपनी ज़िम्मेदारी बखूबी समझें, क्योंकि जेंडर का मुद्दा समूची मानवता का मुद्दा है।

अकादमिक संपादक

1

शिक्षा के साथ आज़ादी -करे सपने साकार बच्चियों के

किरण देवेंद्र*

आज अधिकांश अभिभावक अपनी बेटियों को पढ़ने के लिए स्कूल तो भेजते हैं, पर उन्हें आज़ादी नहीं देते। शिक्षित परिवारों में भी बेटियों पर अनेक प्रकार की बंदिशें लगाई जाती हैं। बेटियों को भी शिक्षा के साथ आज़ादी मिले तो पूर्ण आत्मविश्वास के साथ, मुक्त होकर स्वयं कुछ करने, कार्यों में अगुवाई करने तथा स्वतंत्र निर्णय लेने जैसी क्षमताएँ विकसित होते देर नहीं लगती। प्रस्तुत लेख इसी प्रकार के अनुभव पर आधारित है।

शिक्षा बच्चियों में आसमान छू लेने के सपने साकार कर सकती है। यह मेरा अपना अनुभव है। 4-5 वर्ष की आयु से ही मेरे मम्मी-पापा ने मुझे अपने दो छोटे भाइयों के साथ वह सब कुछ करने दिया जो वे करते थे। हम तीनों मिलकर बनाते बर्फ़ के बुत, फिसलते स्लेज पर बैठकर बर्फ़ पर, रात को नीले आसमान पर तारे देख खुश तथा अचंभित होते और कहानियाँ सुनते या सुनाते। सुबह उठते ही बर्फ़ पड़ी देखकर खुश होते थे। मेरे दादा-दादी कसौली में रहते थे। यदि मेरी इच्छा होती कि उनसे बात करुँ तो मुझे मेरे पापा कहते कि फोन पर ट्रंक कॉल बुक करो और बात करो। यदि मेरा मिलने का मन होता तो वे मुझे बस में बिठा देते और कसौली में मेरे दादा जी मुझे बस से उतार लेते। ये दोनों काम मैंने तीसरी-चौथी कक्षा से ही किए। ऐसी थी, यह कुछ करने की आज़ादी कि मुझे यह समझ आने लगा था कि मैं बच्ची होकर अपनी इच्छा पूरी कर सकती हूँ। ''मैं सक्षम हूँ,'' यह अहसास लगातार आता रहा मुझ में। इसी समय मेरे पापा मेरे लिए मैरी क्यूरी की जीवनकथा लाए। उसे पढ़कर मेरे आत्मविश्वास को दृढ़ता मिली। तिरेपन वर्ष बाद भी मैं मैरी क्यूरी के जीवन से बहुत कुछ सीखने की कोशिश करती हूँ। मैं स्कूल में खेलों, नाटकों और वादविवाद में भाग लेती थी। मैं पढ़ाई में ठीक ही थी। गणित न आने की वज़ह से मैं बहुत अच्छे अंक नहीं प्राप्त कर पाई। हमारे एक नज़दीकी रिश्तेदार ने पापा से कहा की बहुत शर्म की बात है कि किरण एक ऐसे परदादा की परपोती है, जो पत्थर को भी गणित सिखा सकते थे और इसे गणित में पास

* प्रोफ़ेसर, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

होना ही मुश्किल लगता है। इस पर पापा बहुत नाराज़ हुए और कहा कि न मैं आपके बच्चों पर टिप्पणी करता हूँ और आप भी न करें। किरण अपने-आप कुछ रास्ता निकाल लेगी।

गणित नहीं आने पर मुझे कभी शर्मिंदा नहीं होना पड़ा। हम इस सोच के साथ बड़े हुए कि किसी ज़रूरतमंद के काम कैसे आएँ और अस्पताल में जाकर मरीज़ों की मदद कैसे करें। हमारे घर में यह भी शिक्षा का एक आवश्यक हिस्सा माना जाता था। हमारे आने-जाने पर रोक नहीं थी, परंतु मम्मी को यह पता होना चाहिए था कि हम कहाँ हैं और किस समय तक घर लौटेंगे।

हमारे यहाँ जो व्यवहार मेरे दोनों भाइयों के साथ किया जाता था, वही मेरे साथ भी। किसी तरह का भेदभाव नहीं था। जब हम अपने एक रिश्तेदार के घर उनसे मिलने गए तो पापा हम तीनों भाई-बहनों को अपने साथ लेकर उनके मजिस्ट्रेट मित्र को मिलने के लिए ले जाने लगे, तो हमारी रिश्तेदार कहने लगीं, 'किरण को यहीं छोड़ दें। यह कोर्ट में जाएगी क्या? पापा को गुस्सा आ गया और उन्होंने कहा कि यह ज़रूर जाएगी। मेरे भाई भी मुझे आज वही एहसास दिलाते हैं। जब मेरी बुआ के निधन पर मैं गई तो वहाँ बैठक में सभी आदमी बैठे थे। मेरे दोनों भाइयों ने मुझे आगे किया। इस प्रकार हमारे मम्मी-पापा ने हम तीनों भाई-बहनों पर अटूट विश्वास रखा। मैं इस बात पर ज़ोर इसलिए दे रही हूँ, क्योंकि उस ज़माने में अधिकांश बच्चियाँ बंदिशों के साथ ही घरों में रहती थीं और स्कूल-कॉलेजों में शिक्षा प्राप्त करती थीं। सौभाग्यवश मेरे पति तथा उनके परिवार ने भी मुझे बहुत आज़ादी दी। इससे मुझे अपने काम की वज़ह से बार-बार देश में और कभी-कभी विदेश जाने में कोई परेशानी नहीं हुई। मेरे सास-ससुर शिक्षा के महत्त्व को आजीवन मानते रहे और मुझे बंदिशों से मुक्त रखा। मेरे पति का पल-पल का सहयोग मेरी किसी भी कठिनाई को सरल बना देता है।

मुझे यह विश्वास है कि यदि आज भी हम बच्चियों को स्कूल भेजें तथा योग्यता के अनुसार हर बच्ची को उच्च शिक्षा अथवा शिक्षा ग्रहण करने के अवसर दें, तो हर बच्ची में छिपी हुई इच्छा पंख ले उसे आसमान छूने देगी। हमारे देश में ऐसी बच्चियों के हज़ारों उदाहरण हैं जो सीमित साधनों के बावजूद उन ऊँचाइयों को छू पाईं, जिनकी कल्पना उनके परिवारों ने कभी नहीं की थी।

आज के संदर्भ में अधिकतर परिवार बच्चियों को पढ़ाते हैं, पर उन्हें सपने साकार करने की आज़ादी नहीं दे पाते। वे चाहते हैं कि लड़कियाँ वही सब करें जो उनके माता-पिता चाहते हैं। यदि पैसों का अभाव हो तो उच्च शिक्षा के लिए वे लड़कों को ही प्राथमिकता देते हैं। समाज के बहुत-से व्यक्ति अपने विचारों में इतने संकुचित हैं कि अपने या अपने परिवार के अलावा उन्हें यह चिंता ही नहीं रहती है कि उनके आस-पास क्या हो रहा है? यदि हमारे समाज का हर व्यक्ति अपने या अपने परिवार से ऊपर उठ पाता, तो क्या वह दहेज़ के लिए इतनी अधिक महिलाओं का उत्पीड़न और मृत्यु बर्दाश्त करता? यह कैसे सहन कर रहा है

हमारा समाज कि समृद्ध और गरीब परिवार अपनी बच्चियों के जीने और मरने के फैसले स्वयं करें?

शिक्षा के द्वारा समाज में जागृति लाई जा सकेगी। बालिकाओं में, महिलाओं में, पुरुषों में, बालकों में- पूरे समाज में जागृति होगी तो शिक्षित बच्चियाँ, महिलाएँ पूरे देश के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विकास में योगदान दें सकेंगी- उन्हें प्यार और आज़ादी के साथ जीवन और शिक्षा, दें।

शिक्षा ज़रूरी है, हर बच्चे तथा बच्ची के लिए। 6-14 वर्ष के बच्चों का यह मौलिक अधिकार है। मुझे चिंता है उन अनेकानेक बच्चियों की, जिनका जन्म लेने का अधिकार ही उनके माता-पिता तथा समाज मिलकर छीन लेता है। शिक्षक होने के नाते आप इसके खिलाफ़ आवाज़ उठाएँ। आप खुद ही सोचिए आनेवाला भारत कैसा होगा, यदि बच्चियाँ जन्म ही नहीं ले पाएँगी! इसके लिए आप एक आंदोलन शुरू करें और उसका हिस्सा बनें।

❑❑❑

2

मुनिया से स्कूल इतना दूर क्यों?

शारदा कुमारी*

सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से अनेक योजनाएँ शुरू की गई हैं, लेकिन ये योजनाएँ तभी कारगर हो सकती हैं, जब इनसे जुड़े अन्य पहलुओं पर भी ध्यान दिया जाए। इस लेख में बालिकाओं की शिक्षा से जुड़े उन महत्वपूर्ण बिंदुओं पर विचार किया गया है, जो मुनिया जैसी हर नन्ही बच्ची को स्कूल से दूर करते हैं।

'प्राथमिक शिक्षक' जनवरी 2009 अंक में कभी एक कविता पढ़ी थी, 'मुनिया स्कूल क्यों नहीं जाती?' दिल की गहराइयों तक उतरने वाली यह कविता कहती है कि मुनिया ने स्कूल जाना इसलिए छोड़ दिया, क्योंकि उसकी उत्साह और उमंग से भरी आवाज़ को सुनने की गुंजाइश स्कूल की किसी भी कवायद में नहीं है। यह कविता मुनिया द्वारा स्कूल छोड़ देने के संदर्भ में उन सब बेहूदे कारणों को दर्ज़ नहीं करती है, जिनका आमतौर पर 'शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों' में उल्लेख किया जाता था और आज भी किया जाता है। बी. एड. हो या ई टी ई या फिर किसी और नाम से शिक्षकों की तैयारी का कोई भी कार्यक्रम, सभी में एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय पर बात की जाती है। वह विषय है- बालिका शिक्षा। बालिका शिक्षा को लेकर कई गंभीर सवाल पूछे जाते हैं। जैसे- ''भारत में बालिकाओं के विद्यालय न जा पाने या फिर पढ़ाई अधूरी छोड़ने के कारण। इस संदर्भ में जिन कारणों को उभारा जाता है, वे कुछ इस प्रकार के होते हैं–

- माता-पिता में लड़कियों की शिक्षा को लेकर जागरूकता का अभाव और उदासीनता का भाव;
- अभिभावकों की आर्थिक स्थिति;
- विवाह जल्दी छोटी आयु में तथा पर्दा प्रथा;
- लड़कियों द्वारा छोटे भाई बहनों की देखभाल;
- लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की शिक्षा के प्रति भेदभावपूर्ण रवैया;और
- घर के कामकाज का उत्तरदायित्व और अर्थोपार्जन संबंधी गतिविधियों में संलग्नता।

इसमें किसी भी तरह का कोई संशय नहीं है कि हमारे देश की बहुत-सी मुनियाएँ इन कारणों के रहते विद्यालय नहीं जा पाईं और यह

* वरिष्ठ प्रवक्ता, मंडलीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, आर. के. पुरम्, नयी दिल्ली

भी सच है कि पिछले साठ-पैंसठ वर्षों में हम इन कारणों का समाधान खोजने में पूरी तरह से विफल रहे हैं। गरीबी दूर करने के संदर्भ में सरकार द्वारा किए गए तमाम दावों के बावजूद गरीबों की स्थिति जस की तस बनी हुई है। बालिकाओं को घरेलू कामधंधों से निजात दिला पाने की बात तो सोची भी नहीं जा सकती है। अपने छोटे बहन-भाइयों की देखभाल करना उनकी नियति का हिस्सा है, फिर भी आज की तारीख में ये सभी बातें किसी भी तरह से उन्हें विद्यालय जाने से नहीं रोक पा रही हैं। गरीब से गरीब पिता भी सीना चौड़ा करके कहता है–

''चमड़ी देकर भी पढ़ाना पड़े तो भी लल्ली को पढ़ाऊँगा ज़रूर। इसकूल न छुड़ाऊँगा।'' माँ भले ही छोटे भाई को लल्ली की गोद में बस्ते के साथ-साथ लटका दें और छुटकी को उसके पीछे-पीछे भेज दें, परंतु वह इस डर से लल्ली की छुट्टी नहीं करवाती हैं कि कहीं लल्ली की पढ़ाई न छूट जाए। 'पेपरों' के समय वह बिटिया से घर का काम नहीं करवाती और उसे दूध भी देती हैं, जिससे *''बिटिया के लंबर अच्छे आ जाएँ।''*

सर्वशिक्षा अभियान के उद्देश्यों के प्रति अपनी संवैधानिक प्रतिबद्धताओं का ख़्याल करते हुए सरकार भी अपनी तरफ़ से मुस्तैद है लोगों को आकर्षित करने में, कभी वर्दियाँ तो कभी कॉपी-किताबें बाँटकर और 'मिड डे मील' का प्रलोभन देकर। दु:ख की बात तो यह है कि भारत की बहुत-सी मुनियाएँ स्कूल जाने की हसरतों को दिल ही दिल में छुपाए रखती हैं। इन मासूमों की स्कूल जाने की चाहतों के कुचले जाने की जो भी वजह रही हो, वे न तो कभी किसी बी.एड, ई.टी.ई. जैसे अध्यापक प्रशिक्षक कार्यक्रमों में चर्चा का विषय बन पाती हैं और न ही 'सभी के लिए शिक्षा' जैसे विश्व स्तरीय लक्ष्यों को हासिल करने से जुड़े कार्यक्रमों का। असली कारणों में से एक प्रमुख कारण 'मुनिया स्कूल क्यों नहीं जाती' कविता में अच्छी तरह से उभरकर आया है और वह कारण है, 'लड़कियों की आवाज़ को कक्षा में 'स्पेस' न मिल पाना।' सीधे-सपाट शब्दों में कहें तो कह सकते हैं कि उनकी अभिव्यक्ति को तरज़ीह न देना। आश्चर्य की बात तो यह है कि पूरे प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान बाल केंद्रित शिक्षा को घोट-घोटकर समझने वाले अध्यापक कक्षाओं में जाते ही यह भूल जाते हैं कि वे बच्चों के बीच काम करने आए हैं बालिकाओं पर अपने ज्ञान की बौछार करना उनका प्रिय शगल बन जाता है। वे भूल जाते हैं कि कक्षा में मौजूद लड़कियाँ भी अपने अनुभवों के आधार पर विषयवस्तु को समझने-समझाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। दिल्ली के गोलमार्किट इलाके के स्कूल की बात है। कक्षा तीन में 'पर्यावरण अध्ययन' की घंटी में 'मकरसंक्रांति- हमारे त्योहार' पर पढ़ाया जा रहा था। पढ़ाने का तरीका कुछ इस तरह था कि शिक्षिका श्यामपट्ट पर त्योहार मनाने का तरीका लिख रही थीं और बच्चों को इसे अपनी कॉपी में उतारना था। तभी स्नेहलता नाम की छात्रा उठी और बड़े भोलेपन से उसने कहा, ''मैडम! मैडम!! हम नऽ... मकरसंक्रांति ऐसे नहीं मनाते जैसे आप लिख रही हैं। हम तो...'' इससे पहले

कि स्नेहलता अपनी बात पूरी कर सके, मैडम दहाड़ी, ''मुझे तुमसे सीखना पड़ेगा कि मकरसंक्रांति कैसे मनाते हैं? यह तुम मुझे बताओगी? जस्ट सिट डाउन।'' स्नेहलता सहम कर बैठ गई। उस बच्ची के दिल पर क्या बीती, इस बात से बेखबर होकर मैडम पुनः श्यामपट्ट पर निर्जीव से शब्द अंकित करने लगीं। अब तक वे निबंध के उस पड़ाव तक पहुँच गई हैं, जहाँ मकरसंक्रांति पर खाई जाने वाली मिठाइयों का ज़िक्र हो रहा है। मैडम फुर्ती से लिख रही हैं, ''हम सभी इस दिन तिल के लड्डू खाते हैं...।'' स्नेहलता कुछ कहने के लिए कसमसा-सी रही थी।

उसके होंठ बार-बार खुलते फिर सहमकर बंद हो जाते। उसके पास बैठी तन्वी उसकी बेबसी समझ रही थी। वह बहुत ही शालीनता से बोली, ''मैडम! हमारे और स्नेह के घर तो तिल के लड्डू नहीं खाते।'' ''तुम्हारी औकात होगी तभी खाओगी न तिल के ललड्डू! तुम्हारे घर में क्या खाते हैं क्या नहीं, इससे मुझे क्या लेना। अबकी डिस्टर्ब किया तो सीधे क्लास से बाहर कर दूँगी। समझीं!'' मैडम गुस्से से इतना ज़्यादा थर्रा रही थीं, कि कितने ही बच्चों की कलमें सहमकर इधर-उधर छिटक गईं। चौथे दिन पता चला कि स्नेह और तन्वी अब स्कूल नहीं आ रही हैं और न ही वे आएँगी। स्नेह और तन्वी जिस कारण के रहते विद्यालयी परिधि से बाहर हुई, क्या उस कारण की कभी कहीं चर्चा की जाती है? शायद नहीं! परंतु इसे सच समझिए! बहुत-सी बालिकाएँ अपनी आवाज़ को जगह न मिलने के कारण विद्यालय जाना छोड़ देती हैं। 'विद्यालय अनुभव कार्यक्रम' के दौरान बालिका शिक्षा से जुड़ी बहुत-सी उन बातों को समझने का मौका मिला, जिन पर हर उस व्यक्ति को ग़ौर करना होगा जो बालिकाओं की शिक्षा से तनिक भी सरोकार रखते हैं। भारत की दम तोड़ती हुई ग्रामीण अर्थव्यवस्था से त्रस्त होकर बहुत-से ग्रामीण दो वक्त की रोटी के जुगाड़ में दिल्ली आते हैं। सिर पर मैली-कुचैली प्लास्टिक या टूटी-फूटी टीन की छत तथा काम के जुगाड़ के बाद अपने बच्चों (जिनमें बेटियाँ भी शामिल हैं) के दाखिले के लिए हाथ-पैर मारना शुरू कर देते हैं। दाखिला तो मिल जाता है, परंतु दो-तीन दिहाड़ियों के अथक परिश्रम के बाद भी क्या मिल पाती है किसी तरह की सुरक्षा की भावना जो उन्हें मानवीय गरिमा का अहसास दिला सके, उनकी अस्मिता को बनाए रख सके! चारू को दाखिला मिलता है वाल्मीकि बस्ती के स्कूल में। देहात के शुद्ध हवा-पानी का असर है या कुछ और, अन्य लड़कियों की अपेक्षा और कुछ बड़ी-सी दिखती है। स्कूल के 'वाटर मैन' की नज़रें जब-तब उसी को खोजती रहती हैं। वही क्यों, उसी स्कूल की दूसरी पाली में पढ़ने वाले लड़के भी कम नहीं हैं। सातवीं या आठवीं कक्षा में ही पढ़ रहे होंगे। उनकी नज़रें भी चारू को ढूँढती रहती हैं। ''आती क्या खंडाला' से जब मन नहीं भरा तो बेहूदगी की हद पार कर दी और इधर चारू ही नहीं उसके साथ उसकी सहेलियों की हदें भी तय हो गईं। अभी तो बहुत-सी कक्षाएँ उत्तीर्ण करनी थीं, पर छठी पर ही विराम लग गया। बालिका शिक्षा के संदर्भ में क्या इस कारण को भी महत्वपूर्ण मानकर उनके द्वारा शाला त्यागने

की वजहों में जोड़ा जाता है? यह सिर्फ़ वाल्मीकि बस्ती के ही स्कूल की बात नहीं है। देश के कोने-कोने में ऐसे स्कूल हैं, जहाँ अध्यापकों, अन्य कर्मचारियों, मुहल्ले के लड़कों की चुहलबाजियाँ लड़कियों को स्कूल आने से रोकती हैं। विडंबना तो यह है कि जो कुकृत्य करते हैं, वे मस्ताए से घूमते रहते हैं और उनकी दुर्भावनाओं का शिकार हुई लड़कियाँ, 'लड़कियाँ' होने के कारण घर की चौखट में कैद हो जाती हैं। बालिका शिक्षा पर बात करना तभी सार्थक है, जब बालिकाओं को घर में, रास्ते में, विद्यालय में हर तरह की सुरक्षा मुहैया करवाई जाए, अब मैं जिस कारण पर बात करूँगी, वह भी कम चौंकाने वाला नहीं है। सर्वशिक्षा अभियान का 'स्कूल चलें हम' छोटी-बड़ी सभी लड़कियों को स्कूल की ओर आमंत्रित करता है। चहकती, खिलखिलाती लड़कियाँ स्कूल के माहौल को खुशगवार बना देती हैं, परंतु यह खुशनुमा-सा माहौल कभी-कभी उनके लिए स्कूल छोड़ने की वजह भी बन जाता है। किशोरावस्था की ओर कूदती-फाँदती इन लड़कियों को अकसर सुनने को मिलता है, ''माँ-बाप ने तौर-तरीके सिखाए हैं या नहीं! लड़कियों का इतना उछलना-कूदना ठीक नहीं है! ये क्या लड़कों की तरह ठहाके लगा रही हो? कदम थोड़े छोटे नहीं रख सकती क्या? ऐसे क्या लड़कों की तरह मस्ती से चल रही हो? फैशन करना है तो घर पर बैठो! ये स्कूल है! खबरदार! जो शाम की पाली के लड़कों का इंतज़ार किया तो।'' भला कौन इतना कठोर हृदय का होगा जो इन तमाम टिप्पणियों को चुपचाप सहन कर लेगा, पर करना ही पड़ेगा, क्योंकि कहनेवाले 'बड़े' हैं, बच्चियों का भला सोचने वाले 'अध्यापक' हैं। उनकी ये नसीहतें मन को इस सीमा तक बाँध देती हैं कि हताश होकर घर बैठना कहीं अधिक सुखकर लगने लगता है। क्या कभी अध्यापकों और समाज के अनेक अन्य रखवालों ने इस बात पर ग़ौर किया है कि लड़कियों के प्रति गैर संवेदनशील रवैया बहुत-सी लड़कियों के लिए 'स्कूल ड्रॉप आउट' का कारण बन जाता है। 'एक तो करेला, दूजे नीम चढ़ा' की स्थिति तो तब पैदा हो जाती है, जब किसी लड़की के वस्त्रों पर खून के धब्बे देख लिए जाते हैं। कुछ लड़कियों के संदर्भ में पाँचवी-छठी कक्षा तक आते-आते मासिक धर्म आना शुरू हो जाता है। इस ज़िम्मेदारी का निर्वाह करने की क्षमता उनमें खुद ब खुद आ जाती है, परंतु कभी-कभी असावधानी हो ही जाती है। यह ऐसा तो कारण नहीं है कि लड़की को लड़की होने के लिए प्रताड़ित किया जाए। ऐसी भी वजह नहीं है कि घर बैठने की सलाह दी जाए या शर्मसार किया जाए। घबराई हुई लड़की जो शरीर में हो रहे परिवर्तनों से पहले ही परेशान है, शर्मिंदगी का बोझ सहन नहीं कर पाती है और 'कहीं अगले महीने भी कुछ ऐसा न हो जाए' इस भय के रहते स्कूल आने का विचार ही त्याग देती है। उठने-बैठने के शऊर सीखने में न तो वे सलीके ही सीख पाती हैं और न ही पढ़ाई पूरी कर पाती हैं। आत्मविश्वास की तो बात ही क्या की जाए अपने 'होने' पर भी उन्हें संदेह होने लगता है!

लड़कियों के स्कूल छोड़ देने के संदर्भ में अब जो बात रखने जा रही हूँ, वह शायद आपको अनहोनी-सी लगे। अधिकांश लोगों के मन में यह धारणा बनी हुई है कि गाँवों एवं शहरी कच्ची बस्तियों में रहनेवाले निचले तबके के लोगों और विशेषकर अशिक्षित/असाक्षर अभिभावकों को शिक्षा की गुणवत्ता से कोई लेना-देना नहीं होता है। वे जानते ही नहीं हैं कि उनके बच्चों को क्या-क्या सीख और समझ लेना चाहिए। बहुत-से लोग यही समझते हैं कि आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए तो यही काफ़ी है कि उनके बच्चे स्कूल में नामांकित हो जाएँ, मिड-डे मिल पा लें, मुफ्त में मिल रही वर्दी-कॉपी किताबों का फ़ायदा उठा लें। ऐसा समझना अपने-आप को भ्रम में रखना है। मेरे अनुभव तो यही सिद्ध करते हैं कि अनपढ़ महिलाएँ भी अपनी लड़कियों की शिक्षा के उपलब्धि स्तर को लेकर उतनी ही चिंतित हैं जितनी कि पढ़ी-लिखी मध्यम एवं धनाढ्य परिवारों की महिलाएँ। गरीबी का दंश भोग रही अनपढ़ महिलाएँ भी समझती हैं कि अगर उनकी बेटियाँ चार वर्ष विद्यालय गई हैं, तो उसे क्या-क्या सीख लेना चाहिए। अपनी इस बात को वज़नदार बनाने के लिए मेरे पास एक नहीं, कई उदाहरण हैं। पहला उदाहरण प्रस्तुत करती हूँ, 'नगर पालिका विद्यालय, औरंगजेब लेन' का। इस इलाके में आकर ही लगता है कि हम भारत जैसे विशाल देश की राजधानी में हैं। चौड़ी -चिकनी, साफ-सुथरी सड़कें, दोनों तरफ़ चौड़े फुटपाथ, नीम और जामुन के विशाल वृक्ष मंत्रियों और उद्योगपतियों -उद्योगपत्नियों के भव्य भवन। मानवीय जीवन को हर तरह की सुविधा प्रदान करनेवाले तमाम आडंबरों से लैस इन भवनों के पिछवाड़े नगरपालिका का माध्यमिक विद्यालय है। उसका भवन भी कम आकर्षक नहीं है। इन हवेलियों से शायद प्रतिस्पर्धा लेना चाहता हो। यहाँ आनेवाली अध्यापिकाओं का शैक्षिक स्तर, रहन-सहन और परिधानों का स्तर भी ऊँचा है। सब कुछ उस इलाके की गरिमा के अनुसार। जिस इलाके में 10-15 कैबिनेट स्तर के मंत्री और चार-पाँच उद्योगपति रहते हों, ज़ाहिर-सी बात है कि वहाँ सौ-दो सौ नौकर- चाकर भी रहते ही होंगे और उनके बच्चे भी। नगरपालिका का स्कूल उन्हीं बच्चों की शिक्षा के प्रति संवैधानिक प्रतिबद्धता को पूरा करता है। इस विद्यालय में कम-से-कम 150 लड़कियाँ प्रतिवर्ष पहली कक्षा में दाखिला लेती हैं। परंतु पाँचवी तक आते-आते इनकी संख्या 25-30 के करीब ही रह जाती है। सवाल यह उठता है कि बाकी बालिकाएँ कहाँ गईं? क्या उनके परिवार गाँव वापिस चले गए? क्या राजधानी के किसी और क्षेत्र में नौकरी या ठौर-ठिकाना मिल गया? क्या उन्हें भी अपने मालिकों के बच्चों की तरह प्राइवेट स्कूल जाने का सौभाग्य प्राप्त हो गया? क्या वे बालविवाह करके अपने ससुराल चली गईं या फिर वे इस जीवन से ही कूच कर गईं। इन सब सवालों का उत्तर 'नहीं' में हैं। वे सब लड़कियाँ इसी इलाके में मौजूद हैं। उनके माता-पिता उनकी पढ़ाई के प्रति जागरूक हैं, स्कूल आना इन लड़कियों को बहुत अच्छा लगता है, फिर भी ये स्कूल आना छोड़ देती हैं, क्योंकि ''तीन

साल स्कूल में बिताने के बाद भी ये वह सब नहीं सीख पाती हैं जो इन्हें सीख लेना चाहिए। यहीं की निवासी मिथिला ने चौथी कक्षा में पढ़ रही बेटी को कहा कि अपनी मौसी को चिट्ठी लिख दे। बिटिया तत्काल कागज़ कलम ले आई। माँ बोली- मौसी को बोल कि भैंसिया गाभन है खूब ख्याल रखियो। सिर्फ़ चारे से काम न चलाइयो। खली, बिनौला, भुस सभी देना। कोई कोताही न बरतना। जो तो हुई कटिया तो घर रख लेना और जो हुआ कटरा तो बेच देना.....'' माँ अपनी रौ में बोलती जा रही थी। बेटी अगले-बगले झाँक रही थी। बोली-ऐ! माँ क्या बोलती जाती है। ये सब स्कूल में नहीं लिखाया जाता। मुझे ऐसा पत्र लिखना नहीं आता। माँ की पेशानी पर बल पड़े। *''चार साल से इसकूल भेजत रही, पर एक ठौ लाइन भी न लिख पा रही।''* अगले दिन अध्यापिका से दरियाफ्त की। पता चला कॉमनवैल्थ खेल अधिकारी, नगरपालिका अधिकारी और मुख्याध्यापिका को पत्र लिखने सिखाए गए हैं। लड़की को तीनों पत्र जुबानी याद थे। अध्यापिका के कहने पर वह पत्र कॉपी में लिखने लगी। माँ ने कॉपी झपटी और झिड़का-''ए मैडम! जे रटी-रटाई बात लिख लेना पढ़ाई होगी तुम्हारे लिए। जो बालक मन की बात लिख न पाएँ, ओ पढ़ाई तुम ही रखो अपने धौरे।'' झिड़कते-झिड़कते अपनी लड़की को घर ले गईं। साथ में सुखिया, वीरमती, शिखा, सुमन, रूक्सार भी चलती बनीं और इनमें से फिर कभी पलटकर स्कूल नहीं गई।

क्या इन कारणों पर भी कभी हम चर्चा करते हैं कि बच्चियाँ कुछ सीख नहीं पा रहीं हैं, इसलिए स्कूल छोड़ देती हैं

एक अध्ययन के अनुसार 26 प्रतिशत बच्चियाँ स्कूलों में दोस्ताना माहौल न मिल पाने के कारण पढ़ाई छोड़ देती हैं और 75 फीसदी लड़कियाँ (ग्रामीण इलाकों की) पढ़ाई अच्छी न होने की वजह से पढ़ाई छोड़ देती हैं। यह सही है कि ग्रामीण क्षेत्रों और गरीब तबकों में पढ़ाई से ज़्यादा बच्चों की ज़रूरत घर के अन्य कामों के लिए हैं फिर भी कमज़ोर शिक्षण स्तर उनके स्कूल न जाने या बीच में छोड़ देने की वजह है। आँकड़े बताते हैं कि स्कूलों की शिक्षा व्यवस्था में गुणवत्ता की बेहद ज़रूरत है। ग्रामीण व गरीबी वाले इलाकों में स्कूल ऐसे स्थान नहीं बन पाए हैं, जहाँ कुछ सीखा जाए। स्कूल छोड़ने की एक बड़ी वजह यह समझ में आई कि चार-पाँच साल स्कूल में बिताने के बाद भी लड़कियाँ ठीक से पढ़ना-लिखना नहीं सीख पाती हैं। अभिभावकों ने ऐसे कई स्कूलों के बारे में बताया, जहाँ लड़कियों को कुछ भी नहीं सिखाया-पढ़ाया जाता है। कुछ ने तो यह भी बताया कि कुछ मैडमें जो विद्यालय के आस-पास रहती हैं, स्कूल टाइम में चार-पाँच लड़कियों को समूह में अपने-अपने घर भेज देती हैं। वहाँ बरतन-चौका, झाड़ू-बुहारी, सब्जी काटना जैसे काम करवाकर छुट्टी से पहले स्कूल बुलवा लेती हैं। ये सब बातें लड़कियों को स्कूल से बाहर करने का बहुत बड़ा कारण बनती हैं। यह पाया गया है कि लड़कियों का स्कूल जाना आज भी सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़ा हुआ है। लड़कियों

को औपचारिक शिक्षा प्रणाली से जोड़ने का मतलब है, उन्हें कई तरह की सुविधाएँ देना। जैसे–सार्वजनिक जगहों पर आना–जाना, लड़कों से बातचीत करना, लड़कों की तरह बातचीत करना, खेलना–कूदना। प्राथमिक स्तर तक तो (जब तक लड़कियाँ छोटी हैं) माता–पिता और यहाँ तक कि कुछ अध्यापक भी यह सब सहन कर लेते हैं, परंतु जैसे ही वे बड़ी (जवान) होने लगती हैं, उनके व्यवहार पर रोक–टोक लगनी शुरू हो जाती है। इस संदर्भ में यह समझा जा सकता है कि क्यों लड़कियों को 11 या 14 साल के बाद स्कूल छोड़ना पड़ता है।

लड़कियों की शिक्षा को लेकर अपंगता भी आड़े आती है। चलने–फिरने में असमर्थ लड़की के सामने स्कूल में कई तरह की शारीरिक दिक्कतें हैं– स्कूल पहुँचना, दरी पर बैठना, शौचालय जाना आदि–आदि। बोलने–सुनने में असमर्थ लड़की की शैक्षिक ज़रूरतें भी अध्यापकों और अभिभावकों की समझ से बाहर हैं। सहायक उपकरण और परिवहन की ज़रूरत अपंग लड़कियों के लिए शिक्षा को एक महँगा सौदा बना देती हैं।

लड़कियों की शिक्षा के संदर्भ में अभिभावकों को तो जागरूक बनाने के लिए बहुत–सी कवायदें की जा रही हैं। इससे कहीं ज़्यादा ज़रूरी है, शिक्षकों की तैयारी। सेवा पूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रमों में लड़कियों की शिक्षा से जुड़े व्यावहारिक पक्षों पर विमर्श किया जाए और कुछ इस तरह की कोशिशें की जाएँ कि लड़कियों की शिक्षा के बारे में हम सभी सोचना शुरू करें।

❑❑❑

3

रिमझिम शृंखला और लैंगिक समानता

लता पाण्डे *

भाषा और साहित्य की पढ़ाई का एक मुख्य उद्देश्य संवेदनशीलता का विकास करना होता है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए एन.सी.ई.आर.टी द्वारा विकसित प्राथमिक स्तर की हिंदी की पाठ्यपुस्तकों में लैंगिक समानता के दृष्टिकोण का विकास करने वाली विषय सामग्री का समावेश तो किया ही गया है, साथ ही अभ्यास भी बच्चों में लिंग आधारित सकारात्मक दृष्टिकोण के विकास में सहायक है। रिमझिम शृंखला में लैंगिक समानता के मुद्दे को किस प्रकार से पिरोया गया है, जानने के लिए पढ़िए यह लेख।

संविधान के अंतर्गत धर्म, जाति, वंश और लिंग आदि आधारों पर सबको समानता का अधिकार दिया गया है। स्वतंत्र भारत में बदलते समाज के साथ महिलाओं की स्थिति में भी बदलाव आया है। उनकी साक्षरता दर बढ़ी है, वे आत्मनिर्भर हुई हैं, प्रत्येक कार्यक्षेत्र में उन्होंने अपनी पहचान बनाकर यह सिद्ध कर दिया है कि समान अवसर मिले तो वे आसमान की बुलंदियों को छू सकती हैं। लेकिन इन बदलावों के बावजूद महिलाओं को लेकर हमारी सामाजिक मान्यताओं, परंपराओं, मानक व्यवहारों और सोच में अपेक्षित बदलाव नहीं आया है।

लिंग आधारित भेदभाव जनित रूढ़िग्रस्त मानसिकता में बदलाव लाना एक चुनौती है। इस चुनौती का सामना शिक्षा व्यवस्था में सुनियोजित बदलाव लाकर किया जा सकता है। इसके लिए अनेक प्रयास भी किए जा रहे हैं। सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत बालिका शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। बीच में ही शाला त्यागने वाली बालिकाओं के लिए कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय जैसी योजना की शुरुआत भी की गई है। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों में भी इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा जा रहा है कि लैंगिक समानता के दृष्टिकोण का विकास करने वाली विषय सामग्री का समावेश इनमें किया जाए।

पाठ्यपुस्तक में बच्चों में लैंगिक समानता का विकास करने वाली विषयसामग्री का समावेश हो तो निश्चित रूप से स्वस्थ मानसिकता लेकर बच्चों का विकास होगा। इसका कारण यह है कि पाठ्यपुस्तकें ही एकमात्र ऐसा साधन हैं, जो विद्यालय जाने वाले प्रत्येक बच्चे को सुलभ होती हैं और पाठ्यपुस्तकें ही एकमात्र ऐसा

* प्रवाचक, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

संसाधन है जो शिक्षण प्रक्रिया के दौरान प्रत्येक शिक्षक के पास भी उपलब्ध होता है। शिक्षक भले ही शिक्षण प्रक्रिया के दौरान किसी भी सहायक सामग्री का उपयोग न करे पर पाठ्यपुस्तक का उपयोग तो प्रत्येक शिक्षक करता ही है।

बच्चों में किसी भी प्रकार के मूल्यों के विकास में भाषा की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भाषा किसी भी संस्कृति में मूल्यों को बनाए रखने का कार्य करती है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली द्वारा विकसित हिंदी की प्राथमिक स्तर की पाठ्यपुस्तकें *रिमझिम शृंखला* में बालक-बालिकाओं के स्वर समान रूप से मुखरित हुए हैं।

आमतौर पर पाठ्यपुस्तकों में लड़कों को साहसी कार्य करते, अपनी विवेकशीलता का परिचय देते, निर्णय लेते दर्शाया जाता है। और लड़कियों के कार्यक्षेत्र का दायरा घरेलू कार्यों, उनकी दूसरों पर निर्भरता, उनमें निर्णय लेने की क्षमता का सर्वथा अभाव ही दिखाया जाता है। *रिमझिम शृंखला* ने इस परंपरा को तोड़ा है। *रिमझिम* की विभिन्न रचनाएँ और उनके अभ्यासों में आए बालिका पात्र वे सब कार्य करती हुई दिखती हैं जो कि उनके समवयस्क बालक करते हैं।

रिमझिम-3 की पंजाब की लोककथा 'बहादुर बित्तो' अपनी सूझ-बूझ और हिम्मत का परिचय देती हुई शेर पर काबू पाती है। *रिमझिम-5* की तिब्बती लोककथा 'राख की रस्सी' की लड़की अपने विवेक चातुर्य से सबको चकित कर देती है। 'बहादुर बित्तो' लोककथा के पश्चात् अभ्यास के अंतर्गत एक प्रश्न है- बित्तो की हिम्मत तुम्हें कैसी लगी? अगर तुम बित्तो की जगह होती तो शेर से कैसे निपटतीं? यह सवाल निश्चय ही कक्षा की सभी बालिकाओं को प्रश्न का उत्तर तो विचारने का अवसर देगा ही, बहादुर बित्तो की तरह ही कुछ वीरता के कारनामे करने की सोच भी उनमें उपजाएगा।

'बहादुर बित्तो' कथा के अंतर्गत ही अभ्यास दिया गया है। कई जगहों पर गाँवों में औरतें खेतों में भी काम करती है। तुम्हारे आस-पास

की औरतें और लड़कियाँ क्या-क्या काम करती हैं? यह अभ्यास कक्षा के सभी बच्चों का ध्यान महिलाओं द्वारा किए जाने वाले कार्यों की ओर आकृष्ट कर अत्यंत सहजतापूर्वक नन्हे हृदयों में महिलाओं द्वारा किए जाने वाले श्रम और उनके कार्यों के प्रति श्रद्धा तथा गौरव का भाव विचरित करने में समर्थ है।

इन लोकथाओं को पढ़ने के बाद नन्हे पाठकों के हृदय में स्वत: ही यह सोच विकसित होगी कि महिलाएँ बहादुरी में किसी से कम

नहीं हैं।

घर में निर्णय लेने का कार्य अकसर पुरुष सदस्य ही लेते है, लेकिन *रिमझिम-4* में सम्मिलित कविता 'उलझन' में माँ, चाची और दीदी को भी अपनी बात कहने का अवसर मिला है। कविता की कुछ पंक्तियाँ-

पापा कहते बनो डॉक्टर
माँ कहती इंजीनियर।
भैया कहते इससे अच्छा
सीखो तुम कंप्यूटर।
चाचा कहते बनो प्रोफेसर
चाची कहती अफसर।
दीदी कहती आगे चलकर
बनना तुम्हें कलक्टर।

रिमझिम शृंखला की रचनाएँ भाषा शिक्षण के दौरान दूसरों के प्रति खासकर असमानता, समता या पृष्ठभूमि के अंतर के संदर्भ में बच्चों को संवेदनशील बनाने के अवसर भी देती है। *रिमझिम-4* की 'सुनीता की पहिया कुर्सी' और *रिमझिम-5* की 'जहाँ चाह वहाँ राह' जैसी रचनाएँ इसी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। 'जहाँ चाह वहाँ राह' की इला अपने पैरों से कसीदाकारी कर हिम्मत की अनूठी मिसाल नन्हे पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती है।

आमतौर पर घरेलू कार्यों जैसे खाना बनाना, कपड़े धोना आदि लड़कियों के ही कार्य समझे जाते हैं और लड़कों को इनसे कोसों दूर रखा जाता है लेकिन *रिमझिम* में बच्चे मिलकर सारे कार्य करते हैं। 'थप्प रोटी, थप्प दाल' (*रिमझिम-4*) में बच्चे मिलकर दाल-रोटी बनाते हैं और भरपूर आनंद उठाते हैं। *रिमझिम-4* में

ही 'थप्प रोटी थप्प दाल' नाटक के बाद एक अभ्यास है- तुम्हारे घर में खाना कौन बनाता है? तुम खाना बनाने में क्या-क्या मदद करते हो? नीचे दी गई तालिका में लिखो।

रिमझिम-3 में एक अभ्यास दिया गया है- रोटी बनाने के लिए कितना कुछ काम करना पड़ता है जैसे सानना, बेलना आदि। पता करो और लिखो कि इन्हें बनाने के लिए क्या करना पड़ता है-

- चाय बनाने के लिए
- सब्जी बनाने के लिए
- दाल बनाने के लिए
- हलवा बनाने के लिए
- लस्सी बनाने के लिए

इस अभ्यास को हल करने के लिए कक्षा के सभी बच्चों को स्वत: ही इनकी जानकारी प्राप्त हो जाएगी।

रिमझिम -5 की तिब्बती लोककथा 'राख की रस्सी' का एक सवाल है -

- इस लड़की का तो सभी लोहा मान

गए। है न सचमुच नहले पर दहला। तुम्हें भी यही करना होगा।

रिमझिम-3 में एक अभ्यास के अंतर्गत बच्चों से पूछा गया है- तुम घर के कौन-से काम करते हो? अपने कामों के बारे में बताओ।

रिमझिम-2 की कहानी 'मेरी किताब' की वीरू सभी नन्ही पाठिकाओं के दिलों में पढ़ने के प्रति रुझान जगाती हुई यह संदेश दे जाती है कि अवसर मिले तो विभिन्न रंग-बिरंगी किताबें पढ़ना सभी बच्चों को समान रूप से अच्छा लगता है।

इस प्रकार *रिमझिम शृंखला* की विषय सामग्री लिंग आधारित पूर्वाग्रहों से मुक्त है। *रिमझिम शृंखला* की विषयसामग्री और उनके साथ दिए गए अभ्यासों में ऐसे अवसर भरपूर मात्रा में मिलते हैं, जिनसे बच्चों में लैंगिक समानता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित किया जा सके। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक इन अवसरों का सही ढंग से उपयोग करें।

❑❑❑

4

शिक्षण और पाठ्यसामग्री में लैंगिक संवेदनशीलता और शांति का विस्तृत अध्ययन - मालद्वीप के विशेष संदर्भ में

गौरी श्रीवास्तव*

बच्चों में लैंगिक समानता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में विद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका है। विद्यालयी वातावरण, पाठ्यसामग्री और शिक्षण प्रक्रिया बच्चे में स्वस्थ दृष्टिकोण और मूल्य विकसित कर सकते हैं। प्रस्तुत अध्ययन में मालद्वीपीय शैक्षिक नीतियों, पाठ्यक्रम और विविध पाठ्यपुस्तकों यथा अँग्रेज़ी, सामाजिक अध्ययन तथा पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों का लिंग संवदेनशीलता और शांति के दृष्टिकोण से मूल्यांकन किया गया है।

प्रस्तावना

मालद्वीप को केवल पर्यटन की दृष्टि से ही महत्वपूर्ण माना जाता है, किंतु शिक्षा जगत् में भी उसका अहम स्थान है। मालद्वीप एक ऐसा गणराज्य है, जिसमें हर बच्चा स्कूल जाता है। यहाँ का प्रारंभिक शैक्षिक स्तर दक्षिण एशिया की अपेक्षा बेहतर है। प्रस्तुत अध्ययन में मालद्वीपीय शैक्षिक नीतियों, पाठ्यक्रम और विविध यथा अँग्रेज़ी, सामाजिक अध्ययन तथा पर्यावरण अध्ययन पाठ्यपुस्तकों की लिंग संवदेनशीलता तथा शांति के दृष्टिकोण से मूल्यांकन किया गया है। मालद्वीप में शिक्षण क्रिया एवं पाठ्यसामग्री में राष्ट्रीय मूल्यों को ध्यान में रखते हुए इस्लामी मूल्यों के साथ अच्छा तालमेल किया गया है। वहाँ सरकारी नीतियों, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम का निर्माण लैंगिक संवेदनशीलता को ध्यान में रखते हुए किया गया है। हालाँकि कुछ-कुछ क्षेत्रों में रूढ़िवादिता भी दिखाई देती है। शांति को आवश्यक मूल्य माना गया है और कुरान को इसका आधार बनाया गया है, लेकिन पाठ्यपुस्तकों में आधुनिक सामाजिक समस्याओं के बारे में बहुत कम ध्यान दिया गया है। कक्षा में क्रियाकलाप तथा कक्षा से बाहर अन्य गतिविधियों में लड़के-लड़कियों को समान अवसर दिए जाते हैं। शांति को मानवीय मूल्य रूप में कक्षा तथा कक्षा से बाहर अन्य महत्वपूर्ण स्थानों में विस्तृत रूप से दर्शाया जाता है।

शिक्षा के क्षेत्र में मालद्वीप में एक ही राष्ट्रीय पाठ्यक्रम है। इस द्वीप में प्राथमिक शिक्षा सभी बच्चों के लिए अनिवार्य है। आज की स्थिति में जो अहम चुनौती इस द्वीप की है, वह सभी बच्चों को 10 कक्षा तक अनिवार्यत: शिक्षा प्रदान करना है। इसके लिए सरकार तथा स्वंयसेवी संस्थान प्रयासरत हैं। गुणवत्ता की दृष्टि से अच्छी शिक्षा देना भी अभी मालद्वीप में एक चुनौती के रूप में मौजूद है। यदि हम शिक्षा के आँकड़े देखते हैं, तो सन् 2000 में 15 से 24 वर्ष तक के बालक/बालिकाओं की

* प्रोफ़ेसर और अध्यक्ष, महिला अध्ययन एकक, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

साक्षरता दर 99 प्रतिशत थी और सन् 2007 तक यह स्थिति कायम थी।

प्राथमिक स्तर पर लड़कों की अपेक्षा लड़कियों का शिक्षा में प्रदर्शन ज़्यादा बेहतर है, जबकि उच्च प्राथमिक स्तर पर लड़के/लड़कियों का प्रदर्शन

समान है। शिक्षा नीति में भी लैंगिक संवेदनशीलता और शांति को सम्मिलित किया गया है।

उद्देश्य

मालद्वीप की शिक्षा नीति, पाठ्यक्रम और प्राथमिक स्तर की पुस्तकें, भाषा, सामाजिक अध्ययन और पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों का लिंग संवेदनशीलता तथा शांति के दृष्टिकोण से मूल्यांकन करना।

विधि

प्रस्तुत अध्ययन एक गुणात्मक अध्ययन है। इस विषय पर प्रकाशित सामग्री बहुत ही सीमित है। दक्षिण एशियाई पुस्तकों और शोध में मुश्किल से ही मालद्वीप को शामिल किया गया है। इस अध्ययन में 20वीं शताब्दी में प्रकाशित सामग्री की सहायता ली गई है, जिनमें यूनीसेफ की वार्षिक रिपोर्ट, सांस्कृतिक तथा शैक्षिक स्थिति से संबंधित कुछ दस्तावेज़ों का प्रयोग किया गया है। जैसे- Dias Edward, 1994 में प्रकाशित, mohamed naseema, essays on early maldives, 2006, statistical year book of maldives 2006. अप्रकाशित रिपोर्ट, जैसे- yashi, ahmed, nashid, hassan, nahid, fathimath, gender analysis of primary textbooks, male, 2007 का भी प्रयोग किया गया है। यह रिपोर्ट एजुकेशन ड्वलपमेन्ट सेन्टर में उपलब्ध हैं। सभी पुस्तकों का मूल्यांकन शांति और लिंग संवेदनशीलता की दृष्टि से किया गया है,

जिसके लिए एक सूची तैयार की गई। इसके अलावा अध्यापिकाओं और बच्चों से प्रश्नोत्तरी तथा विचारविमर्श के द्वारा उनसे शांति और लिंग संवेनदनशीलता के विषय में उनके विचार जानने का प्रयास किया गया।

मालद्वीप गणराज्य की शिक्षा नीति

मालद्वीप राज्य की शिक्षा नीति में शांति और लिंग संवेदनशीलता को ध्यान में रखा गया है और सभी बच्चों को गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने के लिए निर्देश दिए गए हैं शांति के दृष्टिकोण से बाल अधिकार, स्वस्थ जीवन तथा जीवन कौशल पर भी ध्यान दिया गया है। यह

शिक्षा नीति इस बात पर भी ज़ोर देती है कि विद्यालय के वातावरण को बेहतर बनाने और बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए समुदाय का सहयोग भी लिया जाना चाहिए। 2020 विज़न दस्तावेज़ भी गुणात्मक शिक्षा, जिसमें सामाजिक एकता, शांति और राष्ट्रीय प्रेम की भावना का समावेश हो, को महत्त्व देती है।

राष्ट्रीय पाठ्यक्रम 1999

प्रस्तुत अध्ययन में 1999 के पाठ्यक्रम को यान में रखा गया है। नया पाठ्यक्रम अभी बन रहा है। इस पाठ्यक्रम में भी लिंग संवेदनशीलता और शांति को ध्यान में रखा गया है तथा पाठ्यक्रम के द्वारा यह भी प्रयास किया गया है कि बच्चों में किन गतिविधियों द्वारा विभिन्न विषयों में शांति के मूल्यों को विकसित किया जाए तथा किस प्रकार आपसी भाईचारे की भावना का विकास किया जाए? इसके अंतर्गत बच्चों के आत्मसम्मान एवं आत्मविश्वास को बढ़ाने के लिए भी चर्चा की गई है। समाज की कुरीतियों को किस प्रकार सुलझाया जाए, इसके लिए भी पाठ्यक्रम में कहा गया है। इस संबंध में सरकारी नीतियों, पाठ्यक्रम, पाठ्यविवरण एवं पाठ्यपुस्तकों को जाँचा-परखा गया है, साथ ही बच्चों और अध्यापिकाओं से इस संबंध में विचारविमर्श किया गया।

पुस्तकों के मूल्यांकन के संदर्भ में

प्रस्तुत अध्ययन में जिन पाठ्यपुस्तकों का मूल्यांकन किया गया है वह शिक्षण विकास केंद्र द्वारा प्रकाशित की गई हैं। इसके अलावा लैंगिक संवेदनशीलता की दृष्टि से नाहिर शाकिर द्वारा लिखे दस्तावेज़ का भी प्रयोग किया है। इन्होंने मालद्वीप की पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषण किया था और अपने लेख में प्रस्तुत किया कि प्रारंभिक अवस्था में पाठ्यपुस्तकों में लैंगिक पक्षपात है।

इस अध्ययन में लैंगिक और शांति के दृष्टिकोण से सामाजिक विज्ञान, पर्यावरण अध्ययन और अँग्रेज़ी भाषाओं की पाठ्यपुस्तकों का मूल्यांकन किया गया। ये सारी पुस्तकें मालद्वीप के एजुकेशन ड्वलपमेंट सेंटर से प्रकाशित हुई हैं। सारी पुस्तकें अँग्रेज़ी भाषा में लिखी गई हैं केवल 'दिवेही' जो मातृ भाषा है, की पुस्तक उसी भाषा में रची गई है, प्रस्तुत अध्ययन में उसका ('दिवेही' भाषा की पुस्तक) मूल्यांकन नहीं किया गया है।

इस अध्ययन में जितनी भी पुस्तकों का मूल्यांकन किया गया है, उनकी अधिकांश लेखक महिलाएँ हैं। महिला लेखिका होने की वजह से शायद चित्रों एवं लेखों में महिलाओं के योगदान को नज़रअंदाज नहीं किया गया है। सभी पुस्तकों में लड़के-लड़कियाँ तथा महिला-पुरुष का जिस भी क्षेत्र में योगदान रहा है, वह बराबर दर्शाया गया है।

सभी पुस्तकों के मूल्यांकन से यह प्रतीत होता है कि शांति और लिंग संवेदनशीलता जैसे मूल्य हर पाठ में पिरोए गए हैं। शांति के संदर्भ में इस्लामी धर्म के मूल्यों पर ज़्यादा ज़ोर दिया गया है, जबकि समाज की कुरीतियों को कैसे दूर किया जाए, उस पर बहुत कम ध्यान दिया गया है। आधुनिक सामाजिक समस्याएँ जो मालद्वीप को ग्रस्त कर रही हैं, वे हैं - नशाखोरी, बाल शोषण तथा तलाक, जिसकी डर यहाँ संसार में सबसे अधिक है। इन समस्याओं का निराकरण कैसे किया जाए, इस पर किसी भी विषय में टिप्पणी तक नहीं की गई है। पर्यावरण की समस्या

आज मालद्वीप का सबसे बड़ा मुद्दा है। इसका गहराई से कोई भी अध्ययन तथा इस समस्या का समाधान कैसे किया जाए इसके विवरण को किसी भी विषय में प्राथमिकता नहीं दी गई है।

लैंगिक संवेदनशीलता और शांति के संदर्भ में पाठ्यपुस्तकों का मूल्यांकन

अँग्रेज़ी- मालद्वीप में शिक्षा का माध्यम अँग्रेज़ी है तथा वह एक विषय भी है। प्राथमिक स्तर पर जिन पुस्तकों का मूल्यांकन किया गया है, वह 1 से 7 ग्रेड में पढ़ाई जाती हैं। कोर रीडर तथा पीयूपुइल्स् बुक हर ग्रेड में पढ़ाई जाती है। हर ग्रेड का कोर रीडर तथा पीयूपुइल्स् बुक अलग है। कोर रीडर तथा पीयूपुइल्स् बुक में भाषा का प्रयोग बहुत सरल है और लिंग के दृष्टिकोण से कोई भेदभाव नहीं दर्शाया गया है। जिस शब्दावली को प्रयोग किया है वह पुरूष और महिलाओं के बारे में वे दर्शाते है, जैसे he/she, his/her, human people इत्यादि। व्यक्तियों का नाम उन्हीं रचनाओं में दिया गया है, जो उनके कार्य को उभारते हैं। कुछ ऐसे पाठ भी पाए गए हैं, जहाँ महिलाओं का समाज में योगदान तथा उनकी स्थिति में बदलाव को बहुत अच्छे ढंग से प्रदर्शित किया गया है। जैसे- पारिवारिक क्षेत्र में, हथकरघे के क्षेत्र में, शिक्षा के क्षेत्र में और विभिन्न सरकारी दफ्तरों में नारी की भागीदारी का विवरण किया गया है।

प्राचीन और आधुनिक युग में राजनीति की बागडोर एवं अन्य सरकारी विभागों की अध्यक्षता महिलाओं ने की। इसके बारे में भी पीयूपुइल्स् बुक में दर्शाया गया है। इससे यह ज्ञात होता है कि मालद्वीप का समाज महिलाओं को द्वितीय स्थान नहीं प्रदान करता है। यह केवल किताबों में ही नहीं दर्शाया गया है, बल्कि अध्यापिकाओं और अभिभावकों से विचारविमर्श के दौरान यह पता चला कि बचपन से ही माँ-बाप लड़के और लड़कियों में भेदभाव नहीं करते हैं। वे शिक्षा, भोजन, स्वास्थ्य और खेलकूद में समान रूप से अपने बच्चों का विकास करते हैं।

यह सही कहा गया है कि किताबें समाज का एक दर्पण हैं और इसी के संदर्भ में लिंग संवेदनशीलता के दृष्टिकोण से अँग्रेज़ी किताबों में समाज में पुरुष और महिलाओं की समानता को बहुरूपी ढंग से बताया गया है। अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तकों की एक और विशेषता यह है कि इसमें सफल महिलाओं के जीवन के बारे में दर्शाया गया है तथा जिन संघर्षों एवं चुनौतियों

का सामना उन्होंने किया, उसके बारे में भी उल्लेख किया गया है। इसके अलावा महिलाओं के संपत्ति में बराबर के अधिकार का भी विवरण किया गया है।

पर्यावरण अध्ययन

पर्यावरण अध्ययन में संपूर्ण लैंगिक समुदाय को चिह्नित किया गया है। कुछ पाठ जो इसकी

झलक देते हैं, वे लड़के-लड़कियों को समान रूप से पौष्टिक आहार ग्रहण करते हुए दर्शाते हैं। इसके अलावा मनोरंजन के साधनों को समान रूप से लड़के-लड़कियों को उपयोग करते हुए दिखाया गया है। विद्यालयी शिक्षा में जो प्राप्त किया गया है, उसे भी बताते हैं, तथा संचार की आधुनिक तकनीकों का प्रयोग करते हुए चित्र पुस्तक में मौजूद हैं और पाठ में इसका उल्लेख किया गया है।

सामाजिक अध्ययन

हर पाठ की विषयवस्तु में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है कि वह लैंगिक समानता को ध्यान में रखकर किया गया है। कुछ शब्द, जैसे - मनुष्य, जनता, he/she , his/her, they/them का प्रयोग किया गया है। केवल उन्हीं पाठों में व्यक्ति विशेष का नाम दिया गया है जो उनसे संबंधित हैं।

अधिकांश चित्र जिनका सामाजिक अध्ययन में प्रयोग किया गया है, वे उनकी भौगोलिक स्थिति, पर्यावरण, रहन-सहन, एवं आर्थिक स्थिति को दर्शाते हैं। कुछ चित्र ऐसे भी हैं, जो लिंग संवेदनशीलता की दृष्टि से उपयुक्त हैं। इनमें महिला और पुरुषों की समान भागीदारी को दर्शाया गया है। दो या तीन पाठ ऐसे हैं, जिनमें मालद्वीप के शासकों के बारे में जानकारी दी गई है। इनमें जो चित्र दिए गए है वे पुरुषों के हैं क्योंकि उनके शासक अधिकतर पुरुष ही थे।

मालद्वीप में कक्षा और कक्षा के भीतर और बाहर की गतिविधियों लिंग संवेदनशीलता एवं शांति का भी ध्यान रखा गया है। जिन कक्षाओं निरीक्षण किया गया उसमें हमने पाया कि कक्षा में व्यवस्थात्मक रूप से भी लैंगिक संवेदनशीलता और शांति को ध्यान में रखा गया है। कक्षा में लड़के और लड़कियाँ साथ-साथ बैठते हैं। उच्च प्राथमिक स्तर पर कुछ विद्यालय जैसे- मदरसा अतुल आलिया, मदरसा अतुल अमीर अहमद तथा मदरसा अहमदीया में लड़के और लड़कियों को अलग बैठाया जाता है। कक्षा में समान रूप से लड़के और लड़कियों को अपने विचार प्रकट करने का मौका दिया जाता है। प्रत्येक कक्षा में एक लड़के और एक लड़की का मॉनीटर नियुक्त किया जाता है। विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों जैसे नृत्य, संगीत, खेलकूद, कुरआन का उच्चारण आदि में लड़के और लड़कियों की समान भागीदारी रहती है। हालाँकि फुटबाल अधिकांशत: लड़के ही खेलते हैं। अध्यापकों का दृष्टिकोण भी लड़के-लड़कियों के प्रति समान है। यदि बच्चों से संबंधित कोई भी व्यावहारिक समस्या उत्पन्न होती है तो अभिभावक व अध्यापक मिलजुलकर उसे सुलझाने का प्रयास करते है न कि विद्यार्थियों को दंड देते हैं।

निष्कर्ष

सारी पाठयपुस्तकों के मूल्यांकन से हम पाते हैं कि मालद्वीप की सभी पाठ्यपुस्तकें उनकी सभ्यता, संस्कृति का भली भांति प्रतिनिधित्व करती हैं। ये सभी पुस्तकें लिंग संवेदनशीलता की दृष्टि से भी उपयुक्त हैं, क्योंकि इन पाठ्यपुस्तकों में हर क्षेत्र में स्त्री और पुरुष की समान भागीदारी और उपस्थिति को दिखाया गया है। सीमित ढंग से कुछ ऐसे शब्दों का

प्रयोग किया गया है जो कुछ हद तक समाज के पुरुष प्रधान दृष्टिकोण को दर्शाते हैं, जैसे- व्यावसायिक कार्य को करते हुए अधिकतर पुरुषों को दिखाया गया है। जैसे- इंजीनियर, बढ़ई, शासक तथा व्यापारी इत्यादि। महिलाओं को ज़्यादातर घरेलू कार्य से जोड़ा गया है। अँग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक में पुरुषों के लिए जो विशेषण दिए गए हैं, वे हैं- स्मार्ट, ऊर्जावान, उत्साही, साहसी जब कि महिलाओं के लिए सुंदर, सुशील, प्यारी, लंबी, पतली, आलसी, मूर्ख, आकर्षक, शब्दों का प्रयोग किया गया है। पर्यावरण अध्ययन में महिलाओं के लिए अच्छी बावर्ची का प्रयोग किया गया है। सामाजिक अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों में पुरुषों को जिन गुणों से युक्त बताया गया है वे हैं प्रसिद्ध, सफल, अच्छा और बुद्धिमान आदि। महिलाओं को दान-पुण्य वाले गुणों से युक्त बताया गया है। ये सभी उदाहरण पाठ्यपुस्तकों में उपस्थित लैंगिक रूढ़िवादिता को दिखाते हैं। जैसे कि पहले कहा गया है, शांति के दृष्टिकोण से केवल मूल्यों पर ही ज़ोर दिया गया है। सामाजिक समस्याओं एवं उनके समाधान, जैसे- तलाक, नशाखोरी तथा बाल शोषण पर कोई चर्चा नहीं है। पर्यावरण की देखरेख और उसके बचाव पर भी बहुत सीमित ढंग से लिखा गया है।

अध्यापकों तथा बच्चों से विचारविमर्श के दौरान लिंग संवेदनशीलता और शांति के संदर्भ में निम्नलिखित सुझाव सामने आए -

- आदर्श महिला- किसी भी क्षेत्र में उनके महत्वपूर्ण कार्यों का विवरण दिया जाना चाहिए।
- प्राचीन समाज से आधुनिक समाज तक बदलती हुई महिलाओं की सामाजिक स्थिति का वर्णन किया जाना चाहिए।
- सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक में मालद्वीप के इतिहास का सविस्तार वर्णन किया जाना चाहिए।
- मालद्वीप के शासकों की आत्मकथा को भी पाठ्यपुस्तकों में शामिल किया जाना चाहिए।
- पर्यावरण की देखरेख और बचाव को महत्त्व देना चाहिए।
- शांति को केवल परंपरागत मूल्यों से न जोड़कर, उसे सामाजिक व आर्थिक स्थिति के अनुसार ध्यान में रखकर व्याख्यायित किया जाना चाहिए।
- लैंगिक संवेदनशीलता और शांति के संदर्भ में कुछ शिक्षकों और छात्राओं की राय थी कि विशेष सूची में बदलाव लाया जाए। औरतों की स्थिति में आ रहे बदलावों को इसमें शामिल किया जाना चाहिए।

❑❑❑

5

उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जिले में स्थित कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय - एक तुलनात्मक अध्ययन

मोना यादव*

सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे के परिवर्तन हेतु शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। स्त्री समाज का आधा हिस्सा है, आधी दुनिया है, जगत् निर्मात्री है। यदि हमें अपने संपूर्ण समाज का विकास करना है, तो हम आधी दुनिया को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते हैं। अतः इस आधी दुनिया, यानी महिलाओं का शिक्षित होना अति आवश्यक है। निश्चित रूप से एक शिक्षित महिला अपने अस्तित्व और अधिकारों के लिए संघर्षशील होती है। शिक्षा एक मौलिक अधिकार है, लेकिन सवाल यह उठता है कि जहाँ अभी जन्म के अधिकार के लिए ही लड़कियों को संघर्ष करना पड़ रहा है, तो फिर शिक्षा के अधिकार के लिए तो बहुत प्रयास करने की ज़रूरत है।

शिक्षा के अधिकार की गारंटी देने के लिए भारत सरकार ने सर्वशिक्षा अभियान के तहत बालिकाओं को केंद्र में रखकर मुख्य रूप से जो राष्ट्रीय योजनाएँ शुरू कीं, उनमें से कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (KGBV) भी एक है। यह योजना ऐसे वंचित वर्गों की लड़कियों के लिए है, जो हाशिये पर धकेल दी गई हैं।

के.जी.बी.वी., कौढ़िहार, (NGO), इलाहाबाद की नई बिल्डिंग

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय एक आवासीय विद्यालय योजना है, जिसका शुभारंभ 2004 को किया गया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य है, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक व गरीबी की रेखा के नीचे की वे बालिकाएँ जो शिक्षा से वंचित हैं तथा जो बालिकाएँ घर की आर्थिक परिस्थितियों, समाज में होनेवाली हिंसा और अन्य किसी कारणवश विद्यालय नहीं जा सकीं तथा पाँचवीं कक्षा के बाद नहीं पढ़ पाई, उन्हें पुनः शिक्षा से जोड़ना

* वरिष्ठ प्रवक्ता महिला अध्ययन विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली

है। इस प्रकार कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय ड्रॉपआउट किशोरियों के लिए हैं और ऐसी लड़कियों के लिए भी जो किसी कारण से विद्यालय नहीं जा पाई तथा जिनका कभी विद्यालय में नामांकन नहीं हुआ चूँकि यह योजना किशोरियों को आवासीय विद्यालय उपलब्ध करवाती है, अत: छात्राओं के सर्वांगीण विकास में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। छात्राएँ प्रत्येक क्षण अध्यापिकाओं की देखरेख में रहती हैं तथा हर समय सीखने-सिखाने की प्रक्रिया से गुज़रती रहती हैं। किशोरियों को विद्यालय में सभी सुविधाएँ मुफ़्त उपलब्ध होती हैं। अत: वे सामाजिक तथा आर्थिक दबावों से मुक्त रहती हैं और परिणामस्वरूप ठीक से पढ़ाई कर पाती हैं, जिसका सकारात्मक परिणाम उनकी उपलब्धि पर पड़ता है।

इस प्रकार इस योजना के उद्देश्य हैं-

- किसी भी कारणवश छूटी पढ़ाई को कक्षा 6, 7, और 8 की पढ़ाई के साथ जोड़ना।
- संगठनात्मक सोच का विकास करना।
- नेतृत्व क्षमता का विकास करना।
- निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना।
- आत्मविश्वास जाग्रत करना।
- अनुसूचित जाति, जनजाति, अल्पसंख्यक और गरीबी की रेखा के नीचे के स्तर वाली किशोरियों को शिक्षित करने का प्रयास करना।

इन उद्देश्यों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना में किशोरियों के आंतरिक और बाह्य विकास पर बल दिया गया है।

हमारे देश के सभी राज्यों में कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय चलाए जा रहे हैं। यह योजना राज्य सरकार द्वारा सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत चलाई जा रही है, जिसमें महिला समाख्या और गैरसरकारी संगठन की भी भागीदारी है। उत्तर प्रदेश में भी के.जी.बी.वी. उपरोक्त तीनों संस्थाओं के सहयोग से चलाए जा रहे हैं। इलाहाबाद ज़िले के तीनों के.जी.बी.वी. में से 'कौराँव,' सर्वशिक्षा अभियान द्वारा, 'शंकरगढ़,' महिला समाख्या द्वारा, 'कौढ़िहार,' गैरसरकारी संगठन द्वारा संचालित हैं। इलाहाबाद रेलवे स्टेशन से कौराँव तथा शंकरगढ़ ब्लॉक के के.जी.बी.वी. लगभग 15-20 कि0मी0 की दूरी पर स्थित हैं, जबकि कौढ़िहार 25-30 कि0मी0 की दूरी पर स्थित है। महिला शिक्षा विभाग एन.सी.ई.आर.टी के कुछ सदस्यों द्वारा इलाहाबाद ज़िले के कौराँव, कौढ़िहार तथा शंकरगढ़ स्थित के.जी.बी.वी. का दौरा किया गया।

अध्ययन का उद्देश्य- इस अध्ययन का उद्देश्य तुलनात्मक दृष्टि से उत्तर प्रदेश में सर्वशिक्षा अभियान, महिला समाख्या और गैरसरकारी संगठन द्वारा चलाए जा रहे के.जी.बी.वी. योजना के उद्देश्यों के संदर्भ में अध्ययन करना था तथा यह जाँचना था तीनों संस्थाओं द्वारा संचालित के.जी.बी.वी. में ढाँचागत और गुणवत्ता के स्तर पर क्या समानताएँ और विभिन्नताएँ हैं। कैसे तीनों के.जी.बी.वी. में ढाँचागत और गुणात्मक स्तर पर समानता स्थापित कर लड़कियों को लाभांवित किया जा सकता है?

अध्ययन की विधि- तीनों के.जी.बी.वी. के अध्यापकों, वार्डन, कर्मचारियों और अभिभावकों से इस विषय में उनके विचार जानने का प्रयास किया गया। इस दौरे के दौरान जो तथ्य उभरकर सामने आए, उन्हें यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

यहाँ दिए गए तथ्य तीनों के.जी.बी.वी. के गुणवत्तासूचक के रूप में चयन प्रकिया, आधारभूत संरचना, पाठ्यक्रम, शिक्षकों की आवासीय स्थिति और विद्यालय के अन्य संबंधित सकारात्मक पक्षों का मूल्यांकन करते हैं।

चयन प्रकिया- इलाहाबाद ज़िले के के.जी.बी.वी. अलग-अलग संस्थाओं द्वारा संचालित हैं। इसीलिए तीनों जगह अलग-अलग चयन प्रक्रिया अपनाई जाती है। **के.जी.बी.वी, शंकरगढ़ महिला समाख्या** द्वारा चलाया जाता है। अत: उसकी चयन प्रक्रिया भी महिला समाख्या द्वारा निर्धारित होती है। महिला समाख्या प्रत्येक गाँव में एक संघ बनाती है। संघ की महिलाएँ घर-घर का सर्वे करती हैं तथा विद्यालय छोड़नेवाली लड़कियों के बारे में पता लगाती हैं। तत्पश्चात् सहयोगिनी को इसकी जानकारी देती हैं, फिर सहयोगिनी घर-घर जाकर अभिभावकों से बातचीत करके उन्हें अपनी लड़कियों को पुन: विद्यालय भेजने के लिए तैयार करती हैं। महिला समाख्या ने इसके लिए किशोरी मंच का भी निर्माण किया है, जो विद्यालय जाने से पूर्व छात्राओं को तैयार करता है। बारह वर्ष से कम किशोरियों का चयन नहीं किया जाता है। जब-जब लड़कियाँ यहाँ पर आती हैं, तब-तब उनका परीक्षण होता है, जिसमें उनके ज्ञान के स्तर के आधार पर ही उनकी परीक्षा ली जाती है। यह परीक्षण लिखित और मौखिक दोनों ही तरह का होता है। यहाँ पर मुख्य रूप से शंकरगढ़ की किशोरियों का ही चयन किया जाता है। एक खास बात जो हमने पाई, वह यह है कि यहाँ लड़कियों को प्रवेश देने से पूर्व तथा घर से लौटने के पश्चात् लड़कियों का प्रेगनेंसी टेस्ट होता है। सुरक्षा की दृष्टि से यह एक सराहनीय कदम है।

के.जी.बी.वी., कौराँव (सर्वशिक्षा अभियान) अलग चयन प्रक्रिया अपनाता है। यह स्थानीय अखबारों में के.जी.बी.वी. से संबंधित विज्ञापन देता है तथा ब्लॉक संसाधन केंद्र से ड्रॉप आउट लड़कियों की सूची प्राप्त करता है। वह लड़कियों को विद्यालय लाने में गाँव के प्रधान, प्रभावशाली व्यक्तियों तथा गाँव के लोगों की मदद लेता है।

स्कूल से शिक्षा प्राप्त कर चुकी लड़कियाँ भी प्रेरक का काम करती हैं। जब लड़कियाँ यहाँ पर आती हैं, तो उनसे लिखित व मौखिक परीक्षा उनके ज्ञान के स्तर के आधार पर ले ली जाती है। यह 'स्तर परीक्षण' वार्डन, अध्यापकों की सहायता से किया जाता है।

के.जी.बी.वी., कौढ़िहार (गैरसरकारी संगठन) द्वारा प्रत्येक गाँव में विज्ञापन के द्वारा के.जी.बी.वी के बारे में जानकारी दी जाती है। शिक्षिकाएँ घर-घर का सर्वे करती हैं तथा विद्यालय छोड़नेवाली लड़कियों के बारे में पता लगाती हैं। तत्पश्चात् अध्यापिकाएँ लड़कियों को विद्यालय

भेजने के लिए घर-घर जाकर अभिभावकों से बातचीत करती हैं तथा उनको तैयार करती हैं। यहाँ पर भी लड़कियों से उनके ज्ञान के स्तर के आधार पर लिखित एवं मौखिक परीक्षा ली जाती है। यहाँ लड़कियों का के.जी.बी.वी. में लाने के लिए गाँव की महिलाओं को सिलाई-कढ़ाई से संबंधित प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि वे उनका विश्वास हासिल कर सकें और निर्भय होकर अपनी लड़कियों को विद्यालय भेज सकें। अभिभावकों को यह प्रशिक्षण एन.जी.ओ द्वारा अपने फंड से ही दिया जाता है।

नामांकन और ठहराव- **के.जी.बी.वी., कौराँव, सर्वशिक्षा अभियान** के विद्यालय में कुल 91 लड़कियों का नामांकन था, जिनमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग की और मुस्लिम लड़कियाँ शामिल थीं। यहाँ ज़्यादातर मुस्लिम लड़कियाँ थीं, क्योंकि यह एक मुस्लिम बहुल इलाका है।

इस के.जी.बी.वी में एक खास बात यह थी कि यहाँ *छः लड़कियाँ ऐसी थीं, जिन्होंने के.जी.बी.वी. से आठवीं उतीर्ण की है तथा वे अब नौवीं कक्षा में पढ़ती हैं और पढ़ने के लिए अन्य विद्यालय में जाती हैं, लेकिन वे अभी भी के.जी.बी.वी. में ही रहती हैं।* डाइट के प्रधानाचार्य ने इन लड़कियों को अनुमति दी है। यह एक अच्छा उदाहरण है, क्योंकि ज़्यादातर लड़कियों ने यह समस्या ज़ाहिर की है कि वे आठवीं के बाद अपनी पढ़ाई जारी नहीं कर पाएँगी। उन्होंने कहा कि हम सभी लड़कियाँ ऐसे परिवारों से आती हैं, जो प्राथमिक स्तर की ही शिक्षा का खर्च वहन नहीं कर सकते हैं, तो फिर वे आठवीं के बाद उन लड़कियों की पढ़ाई का खर्च कैसे उठाएँगे। **के.जी.बी.वी., शंकरगढ़ (महिला समाख्या)** में 91 लड़कियों का नामांकन था, लेकिन दौरे के दौरान हमने पाया कि वहाँ पर केवल 68 लड़कियाँ उपस्थित थीं। वार्डन से बातचीत के दौरान हमने जाना कि अभिभावक ज़्यादा काम होने पर लड़कियों को मज़दूरी के लिए ले जाते हैं। हालाँकि बालश्रम गैरकानूनी है, किंतु उनकी आजीविका का यही एकमात्र साधन है। इसलिए वे अपने बच्चों से भी मज़दूरी करवाते हैं। विद्यालय में नामांकित लड़कियों में से अधिकतर अनुसूचित जनजाति की लड़कियाँ थीं। **के.जी.बी.वी., कौढ़िहार (गैरसरकारी संगठन)** में कुल 100 लड़कियाँ थीं। यहाँ ज़्यादातर लड़कियाँ अनुसूचित जाति की थीं। अनुसूचित जनजाति की एक भी लड़की का नामांकन यहाँ नहीं था।

आधारभूत संरचना- सर्वशिक्षा अभियान द्वारा चलाए जा रहे के.जी.बी.वी. का अपना निजी भवन नहीं है, बल्कि किराए का था। इसके लिए वे लगभग 30,000/-रु. प्रति माह भुगतान करते हैं। उनसे बातचीत के दौरान पता चला कि उनका निजी भवन तैयार हो रहा है। वे जल्दी ही अपने निजी भवन में चले जाएँगे। लड़कियों से बातचीत के दौरान पता चला कि वे वहाँ नहीं जाना चाहती हैं, क्योंकि नया विद्यालय दूर है तथा जिस विद्यालय में वे अभी हैं, उसमें उन्हें खेल का बड़ा मैदान व खेलने के लिए झूले भी पहले से ही लगे हुए हैं।

बहरहाल विद्यालय में कुल सात कमरे थे, जिनमें से तीन पढ़ने के लिए, दो हॉल सोने के लिए, एक रसोईघर और एक ऑफिस के लिए थे। इनमें रोशनी तथा पंखों की व्यवस्था भी थी तथा विद्यालय में कुल चार शौचालय और स्नानघर भी थे। हालाँकि शौचालय और स्नानघर

कौराँव (*SSA*), इलाहाबाद के 'के. जी.बी.वी.' के शौचालयों की स्थिति

की हालत सफ़ाई की दृष्टि से सोचनीय थी। इन शौचालयों और स्नानघर में पानी की सुविधा नहीं हैं। लड़कियों को बाहर से ही पानी ले जाना पड़ता है। शौच के बाद हाथ धोने के लिए साबुन भी नहीं रखा जाता है। लड़कियाँ या तो अपना साबुन इस्तेमाल करती हैं या फिर हाथ ही नहीं धोती हैं, जो उनके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

के.जी.बी.वी., शंकरगढ़(महिला समाख्या) किराए के भवन में स्थित है, जहाँ विद्यालय और छात्रावास एक ही भवन में चलाए जा रहे हैं। विद्यालय में कुल दस कमरे हैं, जिनमें से पढ़ने, सोने, रसोई, स्टोर रूम के लिए एक-एक कमरा तथा वार्डन और महिला लेखाकार को भी एक-एक कमरा मिला हुआ है। इनमें रोशनी तथा पंखों की व्यवस्था भी है तथा विद्यालय में शौचालय और स्नानघर तो हैं, परंतु वे सबके लिए पर्याप्त नहीं हैं। यहाँ पर खेलने के लिए मैदान की व्यवस्था नहीं है।

के.जी.बी.वी, कौढ़िहार(गैरसरकारी संगठन) नई बिल्डिंग में चल रहा है। नई बिल्डिंग में संरचनात्मक आधार पर कई खामियाँ हैं। सबसे ज़रूरी और महत्वपूर्ण बात यह है कि विद्यालय में चारदीवारी नहीं है, जो कि सुरक्षा की दृष्टि से उचित नहीं है। इस विद्यालय के ठीक सामने प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालय स्थित है। कौढ़िहार के प्रबंधक से हमें जानकारी मिली कि चारदीवारी के लिए नई बिल्डिंग के मॉडल में कोई प्रावधान नहीं है। इसके अलावा विद्यालय और छात्रावास के बीच में कोई दरवाज़ा नहीं है, जिसके कारण एक वार्डन द्वारा विद्यालय और छात्रावास को सँभाल पाना मुश्किल होता है। विद्यालय में कुल सात कमरे हैं, जिनमें से तीन पढ़ने, तीन सोने और एक ऑफिस के लिए है। एन.जी.ओ द्वारा रसोईघर के लिए अपने फंड से एक अलग से कमरा बनाया गया है, क्योंकि नई बिल्डिंग में दी गई रसोई छोटी थी। यहाँ पर छः शौचालय और स्नानघर थे, जोकि छात्राओं एवं स्टाफ के लिए पर्याप्त थे। विद्यालय में पंखों और रोशनी की व्यवस्था है। बिजली बार-बार चली जाती है, लेकिन यहाँ पर जनरेटर की व्यवस्था है।

ब्रिज कोर्स का प्रावधान- लिखित और मौखिक परीक्षा के पश्चात् लड़कियों को ब्रिजिंग दी जाती है। तीनों ही जगह ब्रिज कोर्स का

अलग-अलग प्रावधान है। इसके लिए कोई निश्चित समयावधि निर्धारित नहीं है।

कौराँव तथा कौढ़िहार में एक महीने का ब्रिज कोर्स कराया जाता है, जबकि महिला समाख्या द्वारा महिला शिक्षा केंद्र में छः महीने का ब्रिजिंग दिया जाता है। जो लड़कियाँ सीधे महिला शिक्षा केंद्र से आती हैं, उन्हें एक महीने का ब्रिजिंग दिया जाता है। इसके अतिरिक्त सर्वशिक्षा एवं एन.जी.ओ. द्वारा संचालित के.जी.बी.वी. के निरीक्षण से ज्ञात हुआ कि कभी-कभी लड़कियों को सिखाने में अतिरिक्त समय भी लग जाता है।

स्पष्ट है कि तीनों ही 'के.जी.बी.वी.' के ब्रिजिंग की अवधि तथा पाठ्यक्रम में कोई समानता और स्पष्टता नहीं है, क्योंकि यहाँ प्रवेश लेनेवाली लड़कियाँ या तो ड्रॉपआउट होती हैं या फिर ऐसी हैं, जो कभी विद्यालय ही नहीं गईं। उन लड़कियों के लिए एक, दो या तीन महीने में पहली से लेकर छठी तक का सफ़र तय करना बहुत मुश्किल होता है और ऐसा कोई साफ़ निर्देश नहीं दिया गया है कि यदि कोई लड़की तीन महीने में भी नहीं सीखती है, तो क्या किया जाएगा । छठी कक्षा में आकर जब इन लड़कियों को यू. पी. बोर्ड का पाठ्यक्रम पढ़ना पड़ता है, तो इनकी मुश्किलें और भी बढ़ जाती हैं।

बेहतर शिक्षा!
गतिविधि आधारित शिक्षा!
के.जी.बी.वी. (महिला समाख्या), शंकरगढ़, इलाहाबाद की छात्राएँ समूह चर्चा करते हुए।

पाठ्यक्रम और प्रशिक्षण की गुणवत्ता- तीनों ही के.जी.बी.वी. में राज्य द्वारा निर्धारित पाठयपुस्तकों (U.P. Board) को पढ़ाया जाता है। चूँकि के.जी.बी.वी. में पढ़नेवाली लड़कियाँ ड्रॉपआउट होती है या फिर ऐसी हैं, जो कभी विद्यालय ही नहीं गईं; इसलिए तीन या चार महीने की ब्रिजिंग के बाद इन लड़कियों को वही पाठ्यक्रम जो सामान्यतः बच्चों को दिया जाता है समझने में परेशानी होती है।

तीनों ही के.जी.बी.वी. में शिक्षक विभिन्न गतिविधियों द्वारा पाठ को रोचक बनाकर लड़कियों को समझाने का प्रयास करते हैं, जैसे कि रोल प्ले, पाठ्यसामग्री, चार्ट, मॉडल, चित्र आदि के द्वारा। अध्यापिकाएँ शारीरिक गतिविधियों द्वारा भी पढ़ाती हैं। वे इन गतिविधियों में सभी छात्राओं को समान रूप से भाग लेने के लिए प्रेरित करती हैं, जिससे लड़कियों का शारीरिक व मानसिक विकास होता है।

कैसे होता है मूल्यांकन- के.जी.बी.वी,

शंकरगढ़ (**महिला समाख्या**) में नियमित रूप से मासिक परीक्षा ली जाती है, जिससे समय-समय पर उनके स्तर की जानकारी मिलती रहती है। यहाँ प्रत्येक छात्रा का एक प्रोफाइल बनाया गया है, जिसमें वे छात्रा के किए गए मूल्यांकन को दर्ज़ करते हैं। के.जी.बी.वी., कौराँव (**सर्वशिक्षा अभियान**) में मासिक और कभी साप्ताहिक परीक्षा ली जाती है, जबकि के.जी.बी.वी., कौढ़िहार (**एन.जी.ओ.**) में मासिक परीक्षा ली जाती है। इन तीनों ही जगहों पर वार्षिक परीक्षा का भी आयोजन किया जाता है। ये सभी परीक्षाएँ केवल उनके स्तर के परीक्षण के लिए होती हैं।

अतिरिक्त पाठ्यक्रम और रोज़गार प्रशिक्षण के.जी.बी.वी. में रोज़गार से संबंधित कोई योजना उपलब्ध नहीं है। यह फुटकर रूप से लड़कियों को रोज़गार प्रशिक्षण दे रहे हैं, क्योंकि उनके पास के.जी.बी.वी. की कोई लिखित निर्देशिका नहीं है। अतः उन्हें यह भी मालूम नहीं है कि उन्हें रोज़गार प्रशिक्षण के लिए कितनी आगत मिलती है। **के.जी.बी.वी., शंकरगढ़** (**महिला समाख्या**)- में रोज़गार प्रशिक्षण से संबंधित सुविधाएँ, जैसे- कम्प्यूटर रिपेयर, इलैक्ट्रिसिटी आदि कार्य प्रशिक्षित व्यक्तियों के माध्यम से लड़कियों को सिखाए जाते हैं। ये प्रशिक्षित अध्यापक और व्यक्ति उन्हें महिला समाख्या द्वारा ही उपलब्ध कराए जाते हैं। जूडो-कराटे, योग और जीवन कौशल के बारे में भी सिखाया जाता है। उन्हें पेंटिग, नृत्य, गाना-बजाना, गृहकला, पाककला, सिलाई-कढ़ाई, फूलदान बनाना आदि कार्य सिखाए जाते हैं, ताकि लड़कियाँ आत्मनिर्भर बन सकें। महिला समाख्या द्वारा संचालित के.जी.बी.वी. का एक साप्ताहिक अख़बार भी है, जिसमें सभी लड़कियों की भागीदारी रहती है। इस अखबार के माध्यम से लड़कियों को अपनी भावनाएँ व्यक्त करने का अवसर मिलता है। इसके अलावा यहाँ पर लड़कियों के लिए किशोरी संसद भी बनी हुई है, जिसमें संसद की तरह ही लड़कियाँ अपना रोल निभाती हैं, जैसे- प्रधानमंत्री, उप प्रधानमंत्री, सूचना मंत्री, खोया-पाया मंत्री आदि। ये सब अपने नामों के अनुसार ही कार्य करते हैं। इससे व्यवस्थागत रूप से कार्य करने की क्षमता का विकास होता है। लड़कियाँ लोकतांत्रिक मूल्य के प्रति सजग होती हैं तथा उन्हें सामाजिक कर्त्तव्यों का अहसास होता है।

के.जी.बी.वी.,कोराँव(**सर्वशिक्षा अभियान**) में शारीरिक गतिविधियाँ, जैसे योगाभ्यास आदि करवाया जाता है, परंतु आत्मरक्षा से संबंधित (जूडो-कराटे) कोई प्रशिक्षण नहीं दिया जाता है न ही जीवन कौशल के बारे में सिखाया गया है। केवल व्यावहारिक शिक्षा व सिलाई-कढ़ाई ही सिखाई जाती है। यहाँ सफ़ाई, जल, प्रार्थना, अनुशासन और चिकित्सा आदि अनेक क्लब बने हुए हैं। इन सब व्यवस्थाओं को लड़कियों द्वारा ही देखा जाता है।

के.जी.बी.वी., कौढ़िहार (एन.जी.ओ.) में लड़कियों को रोज़गार प्रशिक्षण से संबंधित कार्य में केवल सिलाई-कढ़ाई ही सिखाई जाती

है। यहाँ भी जीवन कौशल तथा आत्मरक्षा संबंधी कोई प्रशिक्षण नहीं दिया जाता है। वार्डन से जानकारी मिली कि लड़कियों के परिवार की महिलाओं को भी यहाँ सिलाई-कढ़ाई से संबंधित प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे वे सभी आत्मनिर्भर बनकर विद्यालय की छात्राओं के लिए प्रेरक का कार्य करती हैं। साथ ही इससे अभिभावकों का यह विश्वास भी बढ़ता है कि हमारी लड़कियों को यहाँ पर कुछ न कुछ सीखने को मिलता है। ये के.जी.बी.वी. जिन **एन.जी.ओ. (जनशिक्षा केंद्र)** द्वारा चलाए जा रहे हैं, वे इलाहाबाद में कम्प्यूटर प्रशिक्षण,

खेलकूद और व्यायाम
रहे अच्छा स्वास्थ्य
खुले व्यक्तित्व के नए आयाम!!

सिलाई-कढ़ाई, ब्यूटीशियन, पेंटिंग, इलेक्ट्रीशियन आदि का प्रशिक्षण देते हैं। टीम के सुझाव पर उन्होंने कहा कि आनेवाले समय में वे के.जी. बी.वी. की लड़कियों को भी इन सभी का प्रशिक्षण देंगे।

स्वास्थ्य तथा खेलकूद से संबंधित सुविधाएँ कौराँव में स्थित के.जी.बी.वी. में लड़कियों को स्वास्थ्य तथा खेलकूद से संबंधित सभी सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। लड़कियों का स्वास्थ्य कार्ड बना हुआ है और हर माह उनका चैकअप किया जाता है। अस्पताल भी पास ही है।

के.जी.बी.वी., शंकरगढ़(महिला समाख्या) में न तो स्वास्थ्य कार्ड बना हुआ है और न ही मेडिकल सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। वहाँ की वार्डन ने हमें बताया कि लड़कियों के इलाज के लिए उन्हें काफ़ी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। के.जी.बी.वी., कौढ़िहार (एन.जी.ओ.) में लड़कियों का स्वास्थ्य कार्ड बना हुआ है, मेडिकल सुविधा भी दी गई है, परंतु वहाँ अस्पताल दूर है। यातायात का साधन न होने के कारण उन्हें आपात्कालीन स्थिति में समस्या का सामना करना पड़ता है।

शिक्षकों की चयन प्रक्रिया- सर्वशिक्षा अभियान और एन.जी.ओ. द्वारा संचालित 'के.जी.बी.वी.' में अध्यापकों का चयन ज़िला स्तरीय समिति तथा डाइट के द्वारा किया जाता है। साक्षात्कार में सफल शिक्षकों का चयन किया जाता है। **के.जी.बी.वी., शंकरगढ़ महिला समाख्या** में शिक्षकों का चयन महिला समाख्या समिति द्वारा ही किया जाता है।

शिक्षक प्रशिक्षण- सर्वशिक्षा अभियान और एन.जी.ओ. द्वारा शिक्षकों को सात दिन जबकि महिला समाख्या द्वारा पंद्रह दिन की ट्रेनिंग दी जाती है। तीनों ही संस्थाओं द्वारा वार्डन को

अलग से कोई ट्रेनिंग नहीं दी जाती है। महिला समाख्या द्वारा हर एक-दो माह पश्चात् शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जाता है।

शिक्षकों की उपलब्धता- पूर्णकालिक शिक्षक और अंशकालिक शिक्षकों का विभाजन विषय के अनुरूप किया गया है- विज्ञान, अँग्रेज़ी और गणित विषय के लिए पूर्णकालिक शिक्षक नियुक्त हैं, जबकि हिंदी, गृहविज्ञान आदि विषयों के लिए अंशकालिक शिक्षकों की नियुक्ति की गई है।

वेतन- तीनों ही के.जी.बी.वी. में पूर्णकालिक शिक्षकों का वेतन 9,200/- प्रतिमाह, अर्द्धकालिक का 7,200/- प्रतिमाह और वार्डन का 11,000/- प्रतिमाह है।

शिक्षकों की आवासीय स्थिति और सुविधाएँ- जिस प्रकार अलग-अलग संस्थाओं द्वारा संचालित के.जी.बी.वी. में शिक्षकों की चयन प्रक्रिया व ट्रेनिंग में अंतर है, उसी प्रकार उन्हें मिलनेवाली सुविधाओं में भी अंतर है। के.जी.बी.वी., कोराँव **(सर्वशिक्षा अभियान)** में पूर्णकालिक शिक्षिकाओं के लिए केवल एक कमरे की ही व्यवस्था है। वार्डन के लिए एक अलग कमरे की व्यवस्था है, किंतु वह बहुत छोटा है, जिससे वार्डन को रहने में असुविधा होती है। वार्डन के परिवार को भी उनके साथ रहने की अनुमति प्रदान नहीं की गई है, जबकि **के.जी.बी.वी., शंकरगढ़ (महिला समाख्या)** में वार्डन और लेखाकार के लिए अलग-अलग रहने की व्यवस्था है। वहाँ भी वार्डन के परिवार को उनके साथ रहने की अनुमति नहीं दी गई है, जिसके कारण अपने परिवार के प्रति अपने दायित्व वह नहीं निभा पाती है। **के.जी.बी.वी, कौढ़िहार (एन.जी.ओ.)** में वार्डन के लिए रहने की तो व्यवस्था है, परंतु उनका परिवार उनके साथ नहीं रह सकता हैं।

के.जी.बी.वी, कौराँव **(सर्वशिक्षा अभियान)** और के.जी.बी.वी, कौढ़िहार **(एन.जी.ओ.)** में शिक्षकों और कर्मचारियों को चौदह दिन का आकस्मिक अवकाश दिया जाता है, जबकि के.जी.बी.वी, शंकरगढ़ **(महिला समाख्या)** द्वारा चौदह दिन का आकस्मिक अवकाश, पंद्रह दिन का चिकित्सा अवकाश तथा तीन महीने का मातृत्व अवकाश दिया जाता है। सर्वशिक्षा अभियान और एन.जी.ओ. की अपेक्षा महिला समाख्या द्वारा संचालित के.जी.बी.वी. में अधिक छुट्टियों का प्रावधान है, जिससे शिक्षकों को सहूलियत मिलती है। इसके अलावा एन.जी ओ. और महिला समाख्या द्वारा संचालित विद्यालय में तो मोबाइल फोन की सुविधा दी गई है, जबकि सर्वशिक्षा अभियान में फोन या मोबाइल फोन की सुविधा उपलब्ध नहीं है। एन.जी ओ. में फोन के लिए 500/- रू. प्रतिमाह महिला समाख्या में 100/-रू. प्रतिमाह दिए जाते हैं। इसी तरह शिक्षकों की आवासीय स्थिति में अन्य स्तरों पर भी असमानताएँ पाई गई।

अन्य सुविधाओं की उपलब्धता और गुणवत्ता- इलाहाबाद के सभी के.जी.बी.वी में मुफ्त भोजन, मुफ्त वर्दी, किताबें, स्टेशनरी, आदि सुविधाएँ दी जाती हैं। ये सभी सुविधाएँ सभी को समय पर उपलब्ध हो जाती हैं तथा

गुणवत्ता की दृष्टि से भी ये बेहतर हैं। सभी के.जी.बी.वी. दूरदराज़ के पिछड़े इलाकों में स्थित हैं। इसलिए उन सभी के.जी.बी.वी. में यातायात का अपना कोई साधन उपलब्ध कराया जाना चाहिए, जो कि तीनों ही के.जी.बी.वी. में नहीं था।

निष्कर्ष-

एक समान उद्देश्य को ध्यान में रखकर एक ही योजना (के.जी.बी.वी.) को अलग-अलग संस्थाओं द्वारा चलाया जा रहा है, हालाँकि इनके आर्थिक निर्देश एक जैसे हैं, लेकिन प्रबंधन और क्रियान्वयन में भिन्नताएँ हैं। इलाहाबाद के तीनों के.जी.बी.वी अपनी सभी समानताओं और विभिन्नताओं के साथ कार्यरत है। इन तीनों के.जी.बी.वी. के बीच कोई अंतर्संबंध नहीं है और न ही व्यवस्थागत आधार पर एकरूपता है। चाहे वह चयन प्रकिया हो या फिर पाठ्यक्रम, अध्यापकों और वार्डन की छुट्टियों का प्रावधान या फिर अध्यापकों की आवासीय व्यवस्था इन सभी स्तरों पर एकरूपता का अभाव है। अगर इन सभी के.जी.बी.वी. में कोई समानता है, तो वह है- लगन का जज़्बा जो यहाँ कार्यरत शिक्षकों व कर्मचारियों में देखने को मिला। बिना अपने भविष्य की निश्चितता की परवाह किए, ये पूरी लगन से इन लड़कियों को शिक्षित करने के लिए अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

हमें यहाँ कार्यरत अध्यापकों और कर्मचारियों की इस ज़िम्मेदार भूमिका को न भूलते हुए उनकी सुविधाओं के लिए भी प्रयास करने चाहिएँ, क्योंकि यदि हम चाहते हैं कि यह योजना सफलतापूर्वक चले और ये सभी अध्यापक और कर्मचारी पूरी ईमानदारी से काम करें तो हमें भी उनका भविष्य सुनिश्चित करने के लिए प्रयास करने चाहिएँ, इससे सुविधाओं की उपलब्धता और गुणवत्ता में सुधार होगा।

इसके अलावा हमें एक ही ज़िले में कार्यरत के.जी.बी.वी. के बीच अंतर्संबंध स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए, ताकि वे अपनी समस्याओं और सफलताओं को एक-दूसरे से बाँट सकें और उनका बेहतर समाधान और उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकें। जो सबसे ज़रूरी बात है, वह यह है कि यदि हम चाहते हैं कि इन के.जी.बी.वी. में एक जैसी प्रतिभा का विकास हो, तो हमें ढाँचागत व व्यवस्थागत स्तर पर एकरूपता स्थापित करने के प्रयास करने होंगे। पाठ्यक्रम व चयन प्रक्रिया संबंधी एकरूपता स्थापित करना अति आवश्यक है। एक महत्वपूर्ण लक्ष्य जिसे हमें नहीं भूलना चाहिए, वह है- इन लड़कियों को आत्मनिर्भर बनाना और इसके लिए आवश्यक है, लड़कियों को रोज़गार और आत्मसुरक्षा से संबंधित प्रशिक्षण दिया जाए। इस दृष्टि से इलाहाबाद के तीनों ही के.जी.बी.वी. की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती है। ये कुछ छोटे-छोटे प्रयास हैं, जिनके माध्यम से हम वर्ग और लिंग के आधार पर पिछड़ी जाति को समांतर लाने का प्रयास कर सकते हैं और समाज में उन्हें उनका स्थान दिला सकते हैं।

कुछ महत्वपूर्ण सुझाव-

- अन्य संस्थाओं के द्वारा संचालित के.जी.बी.वी. की अपेक्षा महिला समाख्या द्वारा

संचालित के.जी.बी.वी. में वार्डन और लेखाकार अपने निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं। सभी निर्णय महिला समाख्या द्वारा ही निर्धारित होते हैं। इस कारण कई बार अनेक समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है। अत: उन्हें थोड़ा लचीला बनाने की आवश्यकता है, ताकि ज़रूरत पड़ने पर वार्डन तथा लेखाकार स्वयं निर्णय ले सकें।

- छात्राओं की चयन प्रक्रिया समान होनी चाहिए। उसके लिए एक निश्चित रूपरेखा होनी चाहिए, ताकि जिन लड़कियों के लिए यह योजना बनी है, वे इससे लाभांवित हो सकें।
- के.जी.बी.वी. में ब्रिज कोर्स के लिए एक ही पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या होनी चाहिए। इसकी समयावधि में थोड़ा लचीलापन बरतना चाहिए। जब तक छात्रा छठी कक्षा स्तर के योग्य न हो जाए, तब तक उसे ब्रिजिंग दिया जाना चाहिए।
- ब्रिज कोर्स के लिए अलग पाठ्यपुस्तकों के विकास की आवश्यकता है, जो इन लड़कियों की पृष्ठभूमि एवं स्तर को ध्यान में रखकर बनाई गई हों ताकि उनकी ब्रिजिंग ठीक से की जा सके, क्योंकि सामान्य छठी कक्षा में आने के लिए उन्हें विशेष ब्रिजिंग की आवश्यकता होती है।
- रोज़गार प्रशिक्षण और जीवन कौशल पर विशेष रूप से ध्यान देने की ज़रूरत है। सभी के.जी.बी.वी. में रोज़गार प्रशिक्षण को एक निश्चित पाठ्यचर्या के रूप में शामिल किया जाना चाहिए, ताकि विभिन्न स्तरों पर ड्रॉपआउट लड़कियों को आत्मनिर्भर बनाया जा सके।
- शिक्षकों को भी एक निश्चित चयन प्रक्रिया के तहत ही चयनित करना चाहिए। सभी शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। वार्डन को विशेष प्रशिक्षण देना चाहिए तथा चयन के पश्चात् भी समय-समय पर उनके विषय के अनुरूप ट्रेनिंग दी जानी चाहिए। के.जी.बी.वी. में बालिकाओं को शिक्षा दी जाती है। इसलिए प्रशिक्षण में लैंगिक संवेदनशीलता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।
- ढाँचागत और व्यवस्थागत स्तर पर एकरूपता स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए और एक ही ज़िले में चल रहे के.जी.बी.वी. के बीच अंतर्संबंध स्थापित करने के प्रयास करने चाहिएँ।
- शिक्षकों की आवासीय स्थिति और सुविधाओं का भी विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है।
- जिस क्षेत्र में के.जी.बी.वी. चल रहा है, उस क्षेत्र की अन्य संस्थाओं, जैसे- हॉस्पिटल आदि के साथ संबंध होने चाहिएँ ताकि लड़कियों के लिए आसानी से स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएँ उपलब्ध हो सकें।
- के.जी.बी.वी. दूरदराज़ के इलाकों में स्थित हैं। यातायात का कोई साधन न होने के कारण आपात्कालीन स्थिति में समस्या का सामना करना पड़ता है। प्रत्येक के.जी.बी.वी. के लिए यातायात का कोई साधन होना चाहिए।

- प्रत्येक के.जी.बी.वी. में शिक्षकों और अध्यापकों के लिए फोन की सुविधा होनी चाहिए। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि ये के.जी.बी.वी. दूरदराज़ के इलाकों में होते हैं, आपात्कालीन स्थिति में फोन के न रहने पर समस्या का सामना करना पड़ सकता है। पूर्णकालिक शिक्षक व छात्राएँ अपने घर से दूर इन विद्यालयों में रहती हैं। इसलिए यदि वे अपने घर पर बात करना चाहें तो इसके लिए फोन की सुविधा होनी चाहिए।
- यहाँ से सफलता प्राप्त छात्राओं की शिक्षा आगे भी ज़ारी रह सके, इसके लिए के.जी.बी.वी. को बारहवीं कक्षा तक करना उचित होगा।

उपरोक्त सुझावों को क्रियान्वित करने पर निश्चित रूप से इन कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों की कार्यप्रणाली पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। कार्यप्रणाली सुदृढ़ होगी तो निश्चित ही यहाँ पढ़नेवाली बालिकाओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने का उद्देश्य पूर्ण हो सकेगा।

''मैं भी पढ़ना चाहती हूँ और सिर्फ़ आठवीं तक नहीं मैं पढ़-लिखकर कुछ बनना चाहती हूँ। कस्तूरबा गांधी विद्यालय में आकर मेरे अंदर आत्मविश्वास जागा है। मैं चाहती हूँ कि ये विद्यालय बारहवीं कक्षा तक हो जाएँ।''

❑❑❑

6
सामाजिक रूढ़ियाँ नारी शिक्षा में बाधक

प्रेम कपाड़िया*

प्रगतिशील समाज की दोनों धुरियों महिला और पुरुष को एक समान रूप से शिक्षित होना होगा। यदि इनमें अंसतुलन हो तो निश्चित ही विकास की गति पर भी इसका प्रभाव देखा जा सकेगा। आज के वैश्विक परिवेश में दक्षिण देशों में यह असंतुलन स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। प्रस्तुत आलेख के माध्यम से एशियाई देशों में नारी शिक्षा की स्थिति तथा उसके निदान के लिए सुझाए गए उपायों पर चर्चा की गई है।

दक्षिण एशिया में शिक्षा का लैंगिक अंतर दुनिया के अन्य क्षेत्रों की तुलना में सबसे ज़्यादा है। एक शिक्षित महिला न सिर्फ़ अपने और अपने परिवार के जीवन स्तर को बेहतर बना सकती है, बल्कि समाज में अपना आर्थिक योगदान भी देती है। दक्षिण एशिया के विकासशील देशों के लिए महिलाओं का शिक्षित होना इसलिए भी ज़रूरी है कि वे अपने देश की बढ़ती हुई आबादी पर काबू पाने और गरीबी को दूर करने में सहायक सिद्ध हों। एक महिला का शिक्षित होना सिर्फ़ इसलिए ज़रूरी नहीं है कि उससे होने वाले लाभों की सूची बहुत बड़ी है, बल्कि सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण यह है कि शिक्षा हासिल करना उसका मानवाधिकार है। सांस्कृतिक परिवेश, संसाधनों की कमी और नीतिनिर्धारकों की संकुचित सोच इस मानवाधिकार के आगे आड़े आती है। मानवाधिकार विकास रिपोर्ट दक्षिण एशिया 2002 में दक्षिण एशियाई लड़कियों और महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति का खुलासा भावी योजनाओं के निर्माण में मददगार साबित हो सकता है।

दक्षिण एशिया के प्रौढ़ अनपढ़ों की संख्या में 50 फीसदी से ज़्यादा महिलाएँ हैं। दो-तिहाई से ज़्यादा लड़कियाँ प्राथमिक पाठशाला से बाहर हैं। पाँचवी जमात से पहले ही बीच में शिक्षा छोड़नेवाली लड़कियों की संख्या करीब 40 फीसदी है। व्यावसायिक शिक्षा में तो बहुत कम लड़कियों का नाम दर्ज हो पाता है। दक्षिण एशिया के संदर्भ में गौरतलब तथ्य यह है कि जहाँ 1970 और 1997 के बीच विकासशील देशों की महिला साक्षरता दर में 32 से 63 फीसदी तक का इज़ाफा हुआ, वहीं इस क्षेत्र में औसतन 17 से 37 फीसदी तक की वृद्धि हुई। दक्षिण एशिया की कुल अनपढ़ जनसंख्या में 63 फीसदी महिलाएँ हैं। पाकिस्तान और नेपाल में महिला साक्षरता दर का आँकड़ा 25 और 21 फीसदी है। नेपाल, बांग्लादेश, पाकिस्तान

* राज्य संसाधन केंद्र, इंदौर (म.प्र.) त्रैमासिक पत्रिका 'जन साक्षरता' (जून 2004) से साभार

और भूटान में लड़कियाँ, लड़कों की तुलना में बहुत कम वर्ष तक स्कूल में रहती हैं, जबकि श्रीलंका और मालद्वीप में स्थिति इनकी तुलना में बेहतर है। भारत में बिहार, उत्तर प्रदेश और राजस्थान में महिला साक्षरता दर की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है, जबकि तमिलनाडु और केरल में स्थिति बहुत अच्छी है। केरल का उदाहरण दर्शाता है कि किस प्रकार एक सीमित आय वाला राज्य उचित नीतियों और दृढ़ राजनैतिक इच्छाशक्ति के बूते पर महिलाओं के शिक्षा हासिल करने के रास्ते में खड़ी रुकावटों को दूर कर सकता है।

दरअसल लड़कियों की शिक्षा के रास्ते में हरेक देश के अलग-अलग कारण होते हुए भी कुछ साझा बाधाएँ भी हैं। दक्षिण एशिया में माता-पिता लड़कियों की स्कूली शिक्षा को ज़्यादा महत्त्व नहीं देते और सार्वजनिक एवं निजी शिक्षा सेवाएँ सामुदायिक ज़रूरतों को पूरा करने वाली शिक्षा मुहैया नहीं करातीं। हालाँकि बदलते हुए सामाजिक और आर्थिक परिदृश्य में दक्षिण एशिया के शहरी स्कूलों में आज अतीत की तुलना में ज़्यादा लड़कियाँ नज़र आती हैं, लेकिन अधिकांश लड़कियों द्वारा मासिक धर्म के शुरू होने पर स्कूल छोड़ने की पारंपरिक प्रथा आज भी प्रचलित है। माता-पिता इस आयु वर्ग की लड़कियों की शादी बहुत जल्दी कर देना चाहते हैं। मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ ज़िले में लड़कियों की 8-9 आयु वर्ग में शादी हो जाना, उन्हें पहली या दूसरी कक्षा से आगे पढ़ने से रोकता है। कर्नाटक के अध्ययन बताते हैं कि ज़्यादा पढ़ी-लिखी लड़कियों के लिए ज़्यादा शिक्षित वर ढूँढ़ना भी मुश्किलों को बढ़ाता है। माता-पिता इस मुश्किल का हल लड़कियों को कम तालीम देने और जल्दी विवाह करने में तलाशते हैं। भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश में 75 फीसदी लड़कियों की शादी क्रमवार 19, 22 और 17 साल की उम्र में ही हो जाती है। नेपाल में करीब 50 फीसदी लड़कियों के हाथ 19 साल की उम्र में पीले कर दिए जाते हैं।

इन मुश्किलों के अलावा शिक्षा पर होनेवाला खर्च भी लड़की की शिक्षा के अवसरों को सिकोड़ता है। सरकार द्वारा शिक्षा पर ज़्यादा-से-ज़्यादा रकम खर्च करने के बावजूद भी स्कूली शिक्षा, मुफ़्त शिक्षा नहीं बन सकी है। अभिभावकों को किताबों और वर्दी का खर्च उठाना पड़ता है।

हाल में दिल्ली में हुई एक जन सुनवाई में लोगों ने शिकायत दर्ज कराई कि दखिले के वक्त हलफनामा भरवाने के लिए बच्चों से रुपए वसूले जाते हैं। बच्चों के स्कूल में बाथरूम तक नहीं है। दिल्ली में एक संस्था द्वारा करवाए गए सर्वेक्षण से यह तथ्य उभरकर सामने आया कि कई अभिभावक अपनी किशोर लड़कियों को स्कूल में शौचालय की व्यवस्था न होने के कारण भी स्कूल नहीं भेजते हैं। गरीब परिवारों की योग्य लड़कियाँ स्कूली खर्च और दूसरी दिक्कतों के कारण शिक्षा से वंचित रह जाती हैं, जबकि वे सीमित संसाधनों के बाद भी लड़के की शिक्षा को प्राथमिकता देते हैं। दक्षिण एशिया के सांस्कृतिक-सामाजिक परिवेश में लड़कियों के सतीत्व को ज़्यादा महत्त्व दिया जाता है। इसलिए अभिभावक लड़कियों को पुरुष अध्यापक

से पढ़ने की इजाज़त देने के पक्ष में नहीं होते। वे घर से ज़्यादा दूर होस्टल में भी नहीं भेजना चाहते। लड़कियों को शादी से पहले पुरुषों से दूर रखने की कोशिश की जाती है। स्कूल की स्थिति, महिला विद्यार्थियों के लिए सुविधाएँ, अध्यापक, पाठ्यक्रम और परीक्षा नीतियाँ आदि उन तत्वों के हिस्से हैं, जो शिक्षा के लैंगिक अंतर में अहम भूमिका निभाते हैं। लड़की को पढ़ाने का फैसला इन बातों से प्रभावित होता है।

घर से स्कूल की दूरी भी लड़कों की तुलना में लड़की की पढ़ाई के अवसर को निर्धारित करती है। ज़्यादा दूरी को परिवार लड़की की सुरक्षा के लिए एक खतरा मानते हैं। ज़्यादा दूरी का मतलब लड़की द्वारा घरेलू कार्यों में कम हाथ बँटा पाना भी है। पाकिस्तान के सिंध इलाके में 31 फीसदी गाँवों में सिर्फ़ एक कि.मी. के अंदर प्राथमिक स्कूल हैं। यह सिंध राज्य में 13.1 फीसदी ग्रामीण महिला साक्षरता दर का एक बहुत बड़ा कारण है। तमिलनाडु के 88 फीसदी रिहायशी इलाकों में एक कि.मी. के अंदर प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध हैं। नतीजतन इस राज्य में 73.7 फीसदी पुरुष साक्षरता दर की तुलना में महिला साक्षरता दर 51.3 फीसदी है। तमिलनाडु के अध्ययन दर्शाते हैं कि एक कि.मी. से ज़्यादा की दूरी बढ़ने का परिणाम यह होता है कि स्कूल जानेवाली लड़कियों की संभावित संख्या में दो फीसदी की कमी आ जाती है। ग्रामीण नेपाल में प्रति कि.मी. की दूरी बढ़ने का मतलब लड़कियों की संख्या में ढाई फीसदी की कमी है। कम दूरी के साथ महिला अध्यापिका का पढ़ाना भी लड़कियों की शिक्षा में मददगार साबित होता है। भारत में केरल एक ऐसा राज्य है, जहाँ सबसे ज़्यादा लड़कियों का नामांकन हुआ है। वहाँ 60 फीसदी अध्यापिकाएँ हैं। इस राज्य में परिवहन व्यवस्था विकसित, सुरक्षित और विश्वसनीय है। इसलिए वहाँ महिलाएँ शहरों से गाँवों में पढ़ाने जाते वक्त हिचकिचाती नहीं हैं। बिहार और उत्तर प्रदेश में यह नामांकन बहुत कम है और वहाँ 20 फीसदी महिला अध्यापक हैं। ग्रामीण इलाकों में महिला अध्यापकों की बहुत कमी है। सड़कों की खस्ता हालत, सीमित यातायात सुविधाएँ और अध्यापन प्रशिक्षण संस्थाओं की कमी भी एक ग्रामीण औरत के अध्यापन प्रशिक्षण लेने में रुकावट बनती है। नेपाल में केवल 10 फीसदी प्राथमिक अध्यापक हैं और बांग्लादेश में यह संख्या 8 फीसदी है, लेकिन वहाँ इस भेदभाव को खत्म करने के लिए एक सार्थक पहल की गई है। वहाँ अध्यापन प्रशिक्षण लेने वालों में कम-से-कम 60 फीसदी महिलाएँ होंगी।

यह तो रही दक्षिण एशिया की स्थिति। अब एक नज़र भारत में नारी शिक्षा की स्थिति पर डाल लेते हैं। इसके लिए उनका जनांकिकीय अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

भारत में कुल महिला जनसंख्या में 14 वर्ष की बालिकाओं की संख्या का प्रतिशत 1901 में 30 था, जो 1971 में बढ़कर 41.9 प्रतिशत हो गया, अर्थात् 1971 में 100 महिलाओं में लगभग 42 लड़कियाँ 14 वर्ष की आयु की थीं। 1971 तक कुल महिला जनसंख्या में 14 वर्ष तक की बालिकाओं का प्रतिशत लगातार बढ़ा है।

1981 की जनगणना के अनुसार 13.16करोड़

बालिकाएँ 14 वर्ष की आयु की हैं। यह संख्या इटली (5.8 करोड़) तथा ब्रिटेन (5.5 करोड़) की कुल जनसंख्या के योग के लगभग बराबर है, अर्थात् जितनी बालिकाएँ हमारे देश में 14 वर्ष की हैं, उतनी कुल आबादी इटली तथा ब्रिटेन की मिलकर है।

बालिकाओं की पारिवारिक समस्याएँ

बच्चों के व्यक्तित्व के विकास में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान होता है, लेकिन उपयुक्त वातावरण के अभाव में लड़कियों के व्यक्तित्व का विकास उपयुक्त नहीं हो पाता है। अनेक ऐसी सामाजिक, आर्थिक समस्याएँ हैं, जो बालिकाओं के विकास में बाधक हैं। लड़कियाँ पर्दा प्रथा के कारण जूनियर हाईस्कूल तक की परीक्षा पास करके घर बैठ जाती हैं। विशेष रूप से मुस्लिम परिवारों में अधिकांश बालिकाओं को माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य नहीं मिलता, क्योंकि लड़कियाँ बड़े होने के साथ पर्दे में रहने को भी बाध्य होती हैं। परिवार अब भी सहशिक्षा को उचित नहीं समझता। लड़कों की तुलना में लड़कियों को परिवार से बाहर निकलकर दूसरों से पूछताछ करके शैक्षिक कठिनाईयों को दूर करने पर भी आपत्ति की जाती है। इस प्रकार लड़कियों की गतिविधियों पर सामाजिक बंदिश स्कूल छोड़ने का कारण बनती है।

उत्तर प्रदेश के बस्ती ज़िले में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार 73 प्रतिशत छात्राओं का कहना है कि उनके माता-पिता उनकी शिक्षा की ओर ध्यान नहीं देते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वे स्वयं भी शिक्षा के प्रति उदासीन हो जाती हैं और उनमें हीनता की भावना का विकास होता है। बहुत-सी लड़कियाँ स्वयं को परिवार पर भार समझकर स्वयं पढ़ाई छोड़ देती हैं, ताकि उनके माँ-बाप को उनकी पढ़ाई पर अधिक धन खर्च न करना पड़े।

लड़कियों को उनके माता-पिता यह समझाते हुए पाए जाते हैं कि वे लड़कियाँ हैं, लड़कियों को शांत, सौम्य और सहनशील होना चाहिए। इसलिए 10-12 वर्ष की होने पर उनके उठने-बैठने, हँसने-बोलने, उछलकूद मचाने आदि पर प्रतिबंध लगा दिया जाता है। लड़के-लड़कियों को साथ-साथ पढ़ने नहीं दिया जाता। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में सहशिक्षा को अच्छा नहीं समझा जाता। माता-पिता लड़की को पढ़ने के लिए दूर भेजना या छात्रावास में रखना भी असुरक्षित समझते हैं।

भारत में 11.92 प्रतिशत लड़कियों की शादी 10 से 14 वर्ष की आयु में और 42.11 प्रतिशत लड़कियों की शादी 15 से 19 वर्ष की आयु में हो जाती है। मध्य हिमालय की महिलाओं पर कुमायूँ क्षेत्र में किए गए एक सर्वेक्षण में पाया गया कि 600 महिलाओं में से 251 लड़कियों की शादी 11 से 15 वर्ष की आयु में हुई, 208 की 16 से 20 वर्ष की आयु में, 88 की 5 से 10 वर्ष की आयु में और 9 की 26 वर्ष की आयु के बीच हुई, अर्थात् अधिकांश लड़कियों की शादी 11 से 15 वर्ष की आयु के बीच हुई। पढ़ाई का संबंध लड़कियों के विवाह से है, क्योंकि बहुत कम लड़कियाँ ही विवाह के पश्चात् पढ़ाई जारी रख पाती हैं। इस

प्रकार विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में कम उम्र में विवाह होने से लड़कियों की पढ़ाई भी जल्दी छूट जाती है।

इतना ही नहीं भाई-बहनों को तैयार करना, उन्हें समय से विद्यालय भेजना आदि कार्य भी लड़कियों को ही करने पड़ते हैं। इस प्रकार

कक्षा एक से आठ तक छात्राओं का प्रवाह तथा कक्षा में बने रहने की दर

कक्षा	1	2	3	4	5	6	7	8
नामांकन का प्रतिशत	100	69.72	55.63	44.26	34.74	26.49	22.45	18.04

स्रोत *- शिक्षा और संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली*

उत्तर प्रदेश के बस्ती ज़िले के एक सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण लड़कियों की आर्थिक स्थिति दयनीय है। 38 प्रतिशत छात्राओं का कहना है कि उन्हें समय पर पुस्तकें, कॉपियाँ आदि नहीं मिल पाती हैं। कभी-कभी तो घर में भोजन तथा वस्त्र की समस्या भी रहती है। छात्राओं ने यह भी बताया कि कभी-कभी यूनिफॉर्म के अभाव में उन्हें विद्यालय से अनुपस्थित होना पड़ता है।

कुछ व्यक्तियों का कहना था कि स्कूल जानेवाले बच्चों के कपड़े अच्छे होने चाहिए। उनके लिए महँगी किताबें, कॉपियों आदि की आवश्यकता होती है। इसलिए स्कूल, कॉलेज तक लड़की को भेजना महँगा होता है।

माध्यमिक कक्षा में आने के समय लड़कियाँ 13 वर्ष के लगभग हो जाती हैं और माता-पिता उनसे यह आशा रखने लगते हैं कि लड़कियाँ घर के कामों में हाथ बटाएँ। भोजन बनाने से लेकर कपड़े धोना, बर्तन साफ़ करना, छोटे भाई-बहनों की देखभाल करना आदि सभी कार्य लड़कियों को करने पड़ते हैं। भाई-बहनों की संख्या अधिक होने के कारण पढ़नेवाली लड़कियाँ काम के बोझ से लदी रहती हैं। सारा काम माँ पढ़नेवाली लड़कियों पर डाल देती हैं, जिससे कभी-कभी उक्त परिस्थितियों से ऊबकर वे पढ़ाई छोड़ देती हैं। समय पर परीक्षा की तैयारी नहीं कर पातीं और न ही विद्यालय समय पर पहुँच पाती हैं। लड़कियों को घर में सहायक के रूप में उपयोगी समझा जाता है। कभी-कभी पूरी प्राथमिकशाला में जहाँ पहली कक्षा से पाँचवीं कक्षा तक कक्षाएँ लगती हैं, केवल एक ही शिक्षिका होती है। वह विशेषत: पाँचवीं कक्षा की पढ़ाई पर ध्यान देती हैं। अन्य बच्चों पर कम ध्यान दे पाती हैं। इसलिए उन्हें सही शिक्षण नहीं मिल पाता।

ऐसी स्थिति में माँ-बाप सोचते हैं कि हम लड़कियों को स्कूल क्यों भेजें। घर में रहेंगी तो काम करेंगी। उनके लिए भी स्कूल कोई आकर्षण नहीं होता। वे पिटने की वजह से भी स्कूल जाने से कतराती हैं। माता-पिता से दूर रहना नहीं चाहतीं, किसी शिक्षिका या शिक्षक से डरती हैं, उन प्रतिबंधों को सहन नहीं कर सकतीं जो स्कूल में लगाए जाते हैं। इस प्रकार लड़कियों के शिक्षण में अनेक पारिवारिक मान्यताएँ एवं परिस्थितियाँ बाधक हैं, जो उन्हें

अनपढ़ रहने या पढ़ाई छोड़ने के लिए बाध्य कर देती हैं।

मध्य हिमालय की 600 महिलाओं के एक सर्वेक्षण में यह पाया गया कि उसमें साक्षर महिलाओं की संख्या 226 थी, जिनमें से 89 ने कक्षा पाँच तक पढ़कर छोड़ दिया। 58 ने पाँचवीं के बाद छोड़ दिया। 7 ने बारहवीं पढ़कर छोड़ दिया तथा 24 लड़कियों ने दसवीं पढ़कर छोड़ दिया तथा 14 लड़कियाँ ऐसी थीं, जो कक्षा बारहवीं तक पढ़ी थीं।

भारत में 100 लड़कियों में से 18.04 प्रतिशत लड़कियाँ ही कक्षा 8 में पहुँच पाई हैं। इस प्रकार कक्षा एक से आठ तक पहुँचते-पहुँचते 100 से 80 लड़कियाँ शिक्षा व्यवस्था से बाहर निकल जाती हैं अर्थात् 20 ही आठवीं कक्षा में पहुँच पाती हैं।

1981 में भारत में 6 से 11 वर्ष के आयु समूह में से 45 प्रतिशत से ऊपर, 12 से 14 वर्ष के आयु समूह में 75 प्रतिशत से ऊपर और 15 से 17 वर्ष के आयु समूह में से 85 प्रतिशत से ऊपर लड़कियाँ स्कूल नहीं जाती हैं। 17 से 23 वर्ष के आयु समूह में से विश्वविद्यालय में शिक्षित लड़कियों का हिस्सा करीब तीन प्रतिशत है।

समस्या का समाधान - दूरस्थ शिक्षा

उक्त परिस्थितियों में पढ़ाई जारी रखने का एकमात्र विकल्प है- दूरस्थ शिक्षा। जो किन्हीं कारणों से शिक्षा का लाभ प्राप्त नहीं कर पाते या असमर्थ रहते हैं, उन्हें यह शिक्षा विद्यालय परिसर से बाहर दी जाती है तथा यह समय और स्थान की सीमाओं से मुक्त है। इसमें शिक्षण में मुद्रित और अमुद्रित पाठ्यसामग्री का प्रयोग किया जाता हैं। इसमें लड़कियों की सामाजिक एवं वित्तीय परिस्थितियाँ कैसी भी हों, वे सरलता से शिक्षा ग्रहण कर सकती हैं। जो लड़कियाँ किसी व्यवसाय में लगी हैं या जिनका विवाह हो चुका है या जो किसी अन्य कारण से अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर सकी हैं और जो शिक्षा को जीवनपर्यंत जारी रखना चाहती हैं, वे दूरस्थ शिक्षा प्रणाली से अपनी रुचि, अपने समय तथा गति के अनुसार शिक्षा पा सकती हैं। अधिकांश शिक्षा विशेषज्ञों का मत है कि दूरस्थ शिक्षा का शैक्षिक दर्शन भी वही है, जो परंपरागत शिक्षा का है। आज विश्व के अनेक देशों में यह बड़ी लोकप्रिय हो रही है। यह विद्या उन लोगों के लिए भी बहुत उपयोगी है, जो बीच में शिक्षा की मुख्य धारा से विरक्त हो गए हैं या अर्थिक, सामाजिक या अन्य कारणों से जिन्हें विद्यालय छोड़ देना पड़ा है। दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से लड़कियों और महिलाओं को घर बैठे शिक्षा प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है।

❑❑❑

7
भारत में महिला शिक्षा

म.वि. कुबड़े*

भारतीय रुढ़िवादी समाज में आज भी नारियों की स्थिति में कोई ज़्यादा बदलाव नहीं आया है। आज भी खापपंचायतें तय करती हैं कि लड़कियों का विवाह किस गोत्र में होना चाहिए। असहज कर देने वाली इस प्रकार की वृत्तियों पर शिक्षा के माध्यम से ही लगाम लगाया जा सकता है। प्रस्तुत आलेख में नारियों की स्थिति को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझने के साथ ही शिक्षा सामाजिक बदलाव में कैसे महती भूमिका अदा कर सकती है इस पर भी विचार किया गया है।

भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी धुरी है, नारी। उसकी दुर्बलता अथवा सशक्तता पर पूरे देश की अस्मिता निर्भर करती है। वर्तमान नारी शिक्षा पर विचार करते हुए कुछ ऐसे तथ्यों का उल्लेख अनिवार्य, है जिनकी भूमिका नारी की वर्तमान स्थिति के निर्माण में बहुत महत्वपूर्ण रही है। मध्ययुगीन स्त्री एक ऐसी निरुपाय स्थिति में जी रही थी, जब उसकी बौद्धिक क्षमता के उन्मेष की रंचमात्र भी संभावना नहीं थी। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में रूढ़िग्रस्त स्त्री मानसिकता को ज्ञान के नए आलोक का संस्पर्श मिला। स्त्री शिक्षा को घोर कलंक मानते हुए उसके साथ वैधव्य की आशंकाओं का तर्क जोड़ने वाले पुरातनपंथी निर्मम युग का अंत हुआ। पुनर्जागरण की उस सदी में स्त्री शिक्षा और उसके व्यक्तिगत विकास के सवाल को एक आवश्यक संदर्भ का रूप देते हुए नारी की बौद्धिक अस्मिता को पहली बार एक उन्मुक्त स्वीकृति मिली। 1961 ईस्वी में साधारण आय वाले समाजसेवी पुरुष धोंडो केशव कर्वे ने प्रथम महिला विश्वविद्यालय की स्थापना की। मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाकर उसकी गरिमा बढ़ाने वाला यह पहला विश्वविद्यालय हुआ। महर्षि कर्वे ने स्त्री शिक्षा प्रणाली में गृहविज्ञान को विशेष महत्त्व दिया था। यह उनकी दूरदर्शिता और परिपक्व विचारशीलता का परिणाम था।

राजा राममोहन राय के सामाजिक सुधार का मुख्य केंद्र भी नारी समस्याएँ ही थीं। नारी शिक्षा, विधवा विवाह, अंतर्जातीय विवाह को व्यावहारिक रूप देने का पहला प्रयास 1882 ई. में 'ब्राह्मण मैरेज एक्ट' बनाकर किया गया। दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज के सिद्धांतों में नारियों को वैदिक युग की तरह शिक्षा का अधिकार दिया गया है। राजा राममोहन राय, दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस,

* राज्य संसाधन केंद्र, इंदौर (म.प्र.) त्रैमासिक पत्रिका 'जन साक्षरता' (जून 2004) से साभार

विवेकानंद, महात्मा गांधी आदि ने नारियों की मर्यादा की रक्षा करते हुए उनके प्रति सहज मानवीय दृष्टिकोण अपनाया। शताब्दियों के कुसंस्कारों से मुक्त होकर आत्मविकास के लिए सजग नारी का एक नया अस्तित्व इस युग में सामने आया।

वर्तमान भारतीय स्त्री शिक्षा के विविध संदर्भों की ओर दृष्टि डालें तो चिकित्सा, प्रशासन, उद्योग, कला, साहित्य, संस्कृति, शिक्षा जगत् आदि प्रत्येक क्षेत्र में स्त्री का पूरा-पूरा सहयोग दिखाई पड़ता है। नारी शारीरिक अथवा बौद्धिक क्षमता की दृष्टि से पुरुष से किसी भी अर्थ में कम नहीं हैं, इस सत्य की पहचान आज के परिवेश में पूरी तरह उभरकर सामने आती है। फिर भी एक प्रश्न जो बार-बार उद्वेलित करता है, वह यह है कि हमारे समाज में यद्यपि लड़कियों को लक्ष्मी आगमन का पयार्य माना जाता है, किंतु व्यावहारिक धरातल पर सच्चाई यह है कि लड़कियों के जन्म लेते ही उन्हें बोझ समझा जाने लगता है। जहाँ लड़के को अपने भविष्य का आधार मानकर उसका बखूबी पालन पोषण किया जाता है, वहीं दूसरी ओर आज भी कई जगह लड़कियों के जन्म पर शोक मनाया जाता है। माता-पिता को इस बात का ग़म खा जाता है कि बड़ी होने पर उसके लिए लड़का देखना पड़ेगा। लड़का मिल भी जाए तो दान-दहेज की राशि जुटानी पड़ेगी। इसी वित्तीय समस्या से बचने के लिए अभिभावकों को बालविवाह की मदद लेनी पड़ती है। बालविवाहों के कारण न सिर्फ़ हँसता-खेलता बचपन शिक्षा-दीक्षा से दूर हो जाता है, बल्कि शारीरिक संबंधों तक मर्यादित और नारकीय हो जाता है, फिर चाहे छत्तीसगढ़ का पण्ढरिया गाँव हो या राजस्थान का जयपुर ज़िला, चाहे झारखंड के गाँव हों अथवा उत्तरांचल के पहाड़ी क्षेत्र। यह वह त्रासदी है, जो भाग्यविधाता नहीं अपितु स्वयं अभिभावक ही अपनी बच्चियों के लिए रच देते हैं।

देश में प्रत्येक वर्ष कच्ची उम्र में ही प्रसव पीड़ा के दौरान हज़ारों बालिकाएँ दम तोड़ देती हैं। बालिकाओं में 30 फीसदी बालिकाएँ किसी न किसी बलात्कार और यौन उत्पीड़न का शिकार होती हैं। 70 फीसदी किशोरियाँ बालविवाह के बाद गर्भधारण कर लेती हैं। स्थिति इतनी भयावह होती जा रही है कि वर्ष दर वर्ष अल्पवयस्क किशोरियों की प्रसव पीड़ा के दौरान होनेवाली मौतों में कमी नहीं आ रही है। ऐसे में पुलिस और प्रशासन दोनों नाकाम साबित हो रहे हैं। जहाँ तक सामाजिक संस्थाओं की बात है, बहुत प्रयास करने के पश्चात् भी ग्रामीणों का सहयोग उन्हें नहीं मिल पाता। जहाँ तक पंचायत प्रतिनिधियों की बात है, वे लोग स्वयं बालविवाहों में सम्मिलित होकर इसे और बढ़ावा दे रहे हैं। नारी गर्भधारण की उम्र 18 से 20 वर्ष के बाद की होती है। छोटी उम्र में माँ बनने पर जान जाने की संभावना 80 फीसदी रहती है। यदि यह ज्ञान लड़कियों को दे दिया जाए तो कम-से-कम अपनी जान गँवाने के डर से ही सही, वे बालविवाह से मना कर देंगी।

बिहार, राजस्थान, उत्तरांचल, उत्तर प्रदेश और झारखंड के गाँव अशिक्षा के अंधकार से ग्रसित हैं। इसका खामियाज़ा वहाँ की मासूम

बच्चियों को भी भुगतना पड़ता है। यदि गाँव में जाकर समाजसेवक लोगों को यह समझाने का प्रयास करते हैं कि बेटियों को शिक्षित करो, उनका उचित पालन-पोषण करो और जब उनमें वयस्क होकर माँ बनने की योग्यता विकसित हो जाए, तब विवाह करो, तो ऐसे में उनका यह उत्तर होता है, "क्या करेंगे हम अपनी बेटियों को पढ़ा-लिखाकर? ज़्यादा पढ़-लिख जाएँगी तो बराबर का लड़का नहीं मिलेगा और क्या पता यदि पढ़ाई-लिखाई के चक्कर में लड़की बिगड़ गई और कुछ उल्टा-सीधा कर बैठी तो? नहीं बाबा! नहीं! हम अपनी बेटियों को नहीं पढ़ाएँगे। इससे तो अच्छा है कि वे समय से अपने घर चली जाएँ।"

आज आवश्यकता है, सामाजिक संस्थाओं और प्रशासन के अंदरूनी हस्तक्षेप की, जिससे अनमोल बचपन को बचाया जा सके। साथ ही कानून लागू करनेवालो को भी कानून का पालन करना होगा, तभी सामान्य व्यक्ति कानून से भय खाएगा। बालविवाह उन्मूलन में यह कारगर अस्त्र होगा।

आज भी स्थिति यह है कि भारतीय नारी, घर और बच्चों के दायित्व से कतई मुक्त नही है। इसलिए शिक्षा की वही प्रणाली हमारे यहाँ उपयुक्त हो सकती है, जिसमें घर-परिवार और अंततः समाज के लिए दायित्व का समुचित बोध निहित हो। औसत भारतीय स्त्री का एक बड़ा हिस्सा ऐसा है, जो या तो अपने अधिकारों से पूरी तरह वंचित है या फिर अधिकार प्राप्ति के लिए सतत् संघर्षरत है। ऐसी दशा में हमारा यह कर्त्तव्य बन जाता है कि हम स्त्री संस्कृति के उत्कर्ष के लिए शिक्षा के प्रतिमानों को और भी चुस्त-दुरुस्त करें। शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत स्त्री की दैनन्दिन अपेक्षाओं को, उसके शारीरिक एवं आत्मिक उन्नयन को आधारभूत लक्ष्य मानकर पाठ्यक्रमों का निर्धारण किया जाए ताकि स्त्री शिक्षा को सही मायने में बल मिल सके। छात्राओं के पाठ्यक्रम में जितने भी विषय रखे जाते हैं, उनका चयन स्त्री के व्यावहारिक जीवन के आदर्शों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। आज 21वीं सदी की स्त्री घर-गृहस्थी के छोटे-बड़े दायित्वों से लेकर देश के सर्वांगीण विकास के व्यापक परिवेश में भी पुरुष के समांतर रेखा में खड़ी है।

❑❑❑

8

झारखंड में आदिवासी लड़कियों की शिक्षा

आशारानी व्होरा*

सामाजिक उत्थान के लिए सरकार द्वारा चलाए गए विभिन्न कार्यक्रमों में से एक कार्यक्रम आदिवासी बालिकाओं की शिक्षा से संबंधित कस्तूरबा गांधी विद्यालय भी है। परंतु सरकारी उदासीनता के कारण इस प्रकार के कार्यक्रम अपने उद्देश्यों से भटक जाते हैं। प्रस्तुत आलेख में झारखंड राज्य में उक्त कार्यक्रम की यथास्थिति को रेखांकित किया गया है ताकि सरकारी व्यवस्था संदवेदनशून्य न होकर इसकी स्वर्णिम सफलता की ओर अग्रसित हो सके।

आदिवासी लड़कियाँ अब पर्यटकों और छायाकारों के लिए मनोरंजन और प्रदर्शन की 'वस्तु' या 'परदेसियों' के लिए यौन तस्करों द्वारा उपलब्ध कराया जाने वाला सस्ता माँसल 'माल' न रह, जागरूक भारतीय नारियों के रूप में अपने नारीत्व के संरक्षण और मानवीय अधिकारों के प्रति सचेष्ट हैं। अच्छा लगता है, यह जानकर कि वे अब सामान्य और विशेष स्कूलों में शिक्षा ले रही हैं। सभ्यता से कटे हुए सुदूर क्षेत्रों की लड़कियों के लिए भी आवासीय स्कूल और छात्रावास हैं।

आदिवासियों को अलग-थलग करके सजावटी अजूबे के रूप में बनाए रखना और जनजातीय विकास तथा सामाजिक एकीकरण के नाम पर, उनकी सांस्कृतिक परंपराओं को नष्ट करना, ये दोनों विचारधाराएँ अतिवादी और अहितकर हैं। इसलिए जब पता चलता है कि झारखंड में आदिवासी लड़कियों की शिक्षा-दीक्षा को एक औसत समन्वित नीति के अनुसार चलाया जा रहा है, तो लेखकीय जिज्ञासा अधिकारियों के नीतिविषयक इस कथन की सत्यता को परखने के लिए प्रेरित करती है और मैं राँची से चालीस मील दूर लोहरदगा में स्थित कस्तूरबा छात्रावास (आदिवासी लड़कियों का हॉस्टल) में घूमकर प्रिंसिपल, अध्यापिकाओं, अधीक्षिका और छात्राओं से बातचीत करने लगती हूँ।

छात्रावास की जो शिक्षिका मेरे साथ थीं, उन्हें एक खबर मिलती है कि एक दिन पूर्व गुंडा-सा दिखने वाला एक युवक शराब के नशे में धुत्त होकर खिड़की की राह हॉस्टल में घुस आया था और लड़कियों ने मिलकर उसे घसीटते हुए गुसलखाने में बंद करके पकड़वा दिया था। इधर-उधर झुंड बनाकर घूम रही लड़कियों में उस दिन चर्चा का मुख्य विषय यही था। शिक्षिका को देखकर 'परनाम' करने के बाद लड़कियों ने उस घटना का ब्यौरा सुनाया था। भीतर जाने पर शायद इसी घटना की जाँच के

*त्रैमासिक पत्रिका 'नारी संवाद' (सितंबर, 2008)से साभार

लिए आए क्षेत्र के.बी.डी.ओ. तथा राँची के असिस्टेंट वेलफेयर ऑफिसर से भेंट हुई थी। उन्होंने बताया कि यहाँ बिरहोर, असुर, खड़िया, कुरबा जैसी पिछड़ी हुई जातियाँ हैं, जिनमें अब पर्याप्त जागृति आ रही हैं, परंतु अधिक उन्नति उरांव और देशभक्ति के लिए प्रसिद्ध गांधीवादी टानाभगत जातियों में ही हुई है। लड़कियाँ इंटीरियर गाँव से भी शिक्षा के लिए आ रही हैं। समस्या संस्थाओं की और उनमें अपेक्षित जगह और सुविधाओं की कमी की है, अन्यथा प्रवेश चाहने वाली लड़कियों की संख्या बहुत है। वे पूरी कोशिश करते हैं, उन्हें शिक्षा देने के साथ-साथ अपने घरों के खानपान और रीतिरिवाज़ के साथ जोड़े रखने की। एक दिन पूर्व की छात्रावास की उस घटना पर हमारे बीच कोई बातचीत नहीं हुई। मैंने जानबूझकर बात नहीं उठाई। चाहा, वे स्वयं बताएँ परंतु उन्होंने इस बारे में कुछ ज़ाहिर नहीं किया।

छात्रावास की उस पुरानी इमारत में जहाँ यह घटना घटी थी, चहारदीवारी थी, बड़ा-सा फाटक था और उसमें कम उम्र की मिडिल स्कूल की लड़कियाँ रहती थीं, जिनकी संख्या तीस थी। नये हॉस्टल में कुछ पक्के कमरे थे, परंतु न चहारदीवारी थी, न फाटक और न कोई चौकीदार! इसमें हाईस्कूल की बड़ी लड़कियाँ रहती थीं, जिनकी संख्या पचहत्तर थी। छात्रावास की अधीक्षिका रसोई व डाइनिंग हॉल के लिए बनी जगह में रहती थीं। इसलिए पूरे छात्रावास का खाना पुरानी इमारत में बनता था। अधीक्षिका के नाते उन्हें कुछ अतिरिक्त मानदेय भी मिलता था। यह राशि तब नाममात्र ही थी। शायद इसीलिए उनमें छात्रावास, लड़कियों की सुरक्षा और उनकी सुविधा के प्रति चिंता या ज़िम्मेदारी का अभाव था। उनसे हुई बातचीत का एक नमूना प्रस्तुत है:

''यह आम रास्ता है। कोई चहारदीवारी और चौकीदारी भी नहीं है। लड़कियों की रात में सुरक्षा का क्या प्रबंध है?''

''एक-एक लंबे कमरे में कई लड़कियाँ'' हैं। कोई खतरा नहीं है। मैं भी दस बजे के लगभग एक राउंड लेती हूँ।

''उसके बाद?''

''उसके बाद तो ये लोग प्राय: सो ही जाती हैं। कभी-कभी कुछ लड़कियाँ मिलकर सिनेमा देखने चली जाती हैं, तो वे भी दस बजे तक लौट आती हैं।'' ''लेकिन... बाहर से सुना गया है कि कुछ लड़कियाँ सुबह तक या देर रात तक बाहर ही रह जाती हैं और कुछ कमाकर लौटती हैं? ''नहीं, ऐसा नहीं है। मुझे तो इस बारे में कुछ सुनने में नहीं आया। कभी कुछ ऐसा हुआ हो, पर मुझे तो कुछ नहीं मालूम।''

''क्या आपने कभी चहारदीवारी या चौकीदार के प्रबंध के लिए अधिकारियों से कुछ लिखा-पढ़ी की है?'' ''जी नहीं।''

''अच्छा, लड़कियाँ खाली समय में क्या करती हैं? ''बस पढ़ती हैं। खाली समय उनके पास होता ही नहीं है कुछ सिलाई-बुनाई आदि भी करती रहती हैं।''

''स्कूल में कई पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं, जो स्कूल की स्थानीय लड़कियों को भी देखने को नही मिलतीं। क्या आपने कभी हॉस्टल की लड़कियों के लिए उनकी माँग नहीं की?''

''नहीं जी।''

''सुना है, कुछ लड़कियाँ छुट्टी में घर जाती हैं, तो महीनों नहीं लौटतीं?''

''जी हाँ! अधिकतर गरीबी के कारण ही वे घर बैठ जाती हैं। फिर अनाज या पैसा दे सकने की स्थिति में आने पर लौट आती हैं। उनकी इस मजबूरी को देखते हुए हाज़िरी की परवाह न करते हुए भी हम उन्हें ले लेते हैं।''

''तब रिज़ल्ट!''

''रिज़ल्ट ठीक ही होता है।''

बाहर से पता चला कि लड़कियों के फेल होने की संख्या अधिक न दिखाई दे, इसलिए पढ़ाई में कमज़ोर आधी संख्या को प्राइवेट छात्राओं के रूप में परीक्षा फॉर्म भरवाए जाते हैं और शेष को पास करवाने में भी सारी मीशनरी जुट जाती है। अनेक लड़कियों से बात करने पर मालूम हुआ कि वे कोर्स की किताबों के अलावा कुछ नहीं पढ़तीं। कभी किसी समर्थ लड़की के हाथ कोई फिल्मी पत्रिका या रोमानी किताब लग जाती है, तो वह सारी लड़कियों में घूमती है। हाईस्कूल की कुछ लड़कियों को प्रधानमंत्री का नाम भी नहीं मालूम था। अधिकतर उराँव लड़कियाँ थीं, जो समीप के गाँवों एवं कस्बों से आती थीं। पिछड़ी जातियों और सुदूर क्षेत्रों से आनेवाली संख्या नगण्य थी। खूँटी और चापाटोली की लड़कियों के आवासीय स्कूलों में सारा खर्च (कपड़े साबुन, तेल आदि मिलाकर प्रति छात्रा 52/80 प्रति मास तक) ही था। फिर भी अधिक संख्या टाना भगत लड़कियों की ही थी, जो वैसे भी सामान्य स्कूलों में पढ़ने में समर्थ हैं। फिर भी चापाटोली में 348 छात्राओं की जगह पर 220 ही थीं। खूँटी में केवल 88 छात्राएँ थीं। इसलिए बी.डी.ओ. की इस बात में कोई दम नहीं लगता था कि लड़कियों को प्रवेश की कठिनाई है। वास्तव में अपेक्षाकृत उन्नत आदिवासियों में भी लड़कियों को स्कूल तक लाने के लिए विशेष प्रयत्न करने पड़ते हैं।

हाँ, इच्छुक परिवारों की लड़कियाँ रुचि ले रही हैं। इसलिए दूर-दूर से पैदल चलकर भी आती हैं। छात्रावास से लगे स्कूल में कस्बाई छात्राओं की संख्या 425 थी। कुछ अन्य स्कूलों में और मिशन स्कूलों में भी पढ़ रही थीं। प्रधानाध्यापिका ने बताया कि अब दस प्रतिशत से अधिक लड़कियाँ पढ़ाई बीच में छोड़कर नहीं जातीं, यद्यपि 'आदिम जाति सेवा मंडल' से सरकार को हस्तांतरण के बाद गरीब लड़कियों को दी जाने वाली बहुत-सी सुविधाएँ समाप्त कर दी गई हैं। इमारत ही पिछले दस साल से 'रिपेयर' नहीं हुई। अनेक आदिवासी छात्राओं से अलग-अलग खुलकर बात हुई। लगभग सभी के मन में अपने परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए पढ़ाई के बाद नौकरी करने का सपना पल रहा था। कोई नर्स बनना चाहती थीं, तो कोई टीचर। इससे अधिक वे कुछ जानती ही न थीं और न ही उन्हें देश, समाज, आज के संसार का कुछ विशेष ज्ञान ही था। कुछ तो मोटी जानकारी से भी अनभिज्ञ थीं। कुछ लड़कियों ने शिकायत की, "क्रिश्चियन मिशन स्कूल अच्छे हैं। अपने धर्म की शिक्षा तो देते हैं, साथ-साथ पढ़ाई के बाद नर्स, टीचर आदि बनने में मदद भी करते हैं। यहाँ कौन पूछेगा?" परंतु छात्रावास की अधीक्षिका का कहना था,

"घरवाले पढ़ाई भी पूरी नहीं करने देंगे और शादी कर देंगे। इनका यह नौकरी का सपना मात्र गरीबी की प्रतिक्रिया है। इन्होंने पढ़-लिखकर भी न तो बहुत बदलना है, न अपनी आर्थिक स्थिति सुधारनी है।"

बी.डी.ओ. साहब से मैंने यह भी प्रश्न किया था कि इनके घरेलू या स्थानीय उद्योग धंधों, शिल्प एवं दस्तकारियों के विकास के लिए स्थानीय बाज़ार-हाट के अलावा क्या प्रयत्न किया गया है? तो उनका उत्तर था, "अभी तो इन क्षेत्रों में कोई ऐसा संगठित प्रयास नहीं हुआ।" छात्रावास में प्रति छात्रा खर्च कम लिया जाता था, परंतु अधिकांश लड़कियाँ बदले में चावल, दाल आदि एक निश्चित मात्रा में घरों से लाकर देती थीं। गाँव जोरी सहदा की एक लड़की की कहानी तो बहुत मार्मिक थी। वह रोज़ 6 मील से चलकर स्कूल आती थी। सुबह घर से भात खाकर आठ बजे चलती और शाम को घर पहुँचकर खाती। रोज़ बारह मील का सफ़र पैदल तय करनेवाली इस छात्रा के पास दिनभर के लिए न तो चंद पैसे होते थे, न घर से लाया खाना और उसकी आँख में सपना था, मैट्रिक के बाद टीचर्स ट्रेनिंग लेकर नौकरी करना और छोटे भाई-बहन को पढ़ाना। बड़ी बहन के साथ ससुराल में सुलूक ठीक नहीं था। गरीब माँ-बाप पर उसका भी बोझ था। इसलिए वह ऐसा बोझ बनना नहीं चाहती थी।

अत: देखना यह है कि गरीबीजन्य परंपरा की इस जकड़न से मुक्ति का प्रबंध सरकारी योजनाएँ करेंगी या पढ़-लिखकर ये लड़कियाँ स्वयं इस मुक्ति की राह प्रशस्त करेंगी?

❑❑❑

9

उत्तर प्रदेश में कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों को क्रमोन्नत करने के प्रस्ताव की सार्थकता

रश्मि श्रीवास्तव*

कस्तूरबा गांधी विद्यालय योजना वर्तमान समय में बालिकाओं की शिक्षा की एक बड़ी ही लाभप्रद योजना है, किंतु इस योजना का कक्षा-8 तक की ही शिक्षा से संबंधित होना इस योजना के लाभ को सीमित कर देता है। अत: अति आवश्यक प्रतीत होता है कि इन विद्यालयों को क्रमोन्नत करके कम-से-कम हाईस्कूल स्तर तक किया जाए।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय-

कस्तूरबा गांधी विद्यालय योजना मुख्य रूप से अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अन्य पिछड़े वर्ग और अल्पसंख्यकों की बालिकाओं के लिए दुर्गम क्षेत्रों में आवासीय सुविधाओं से युक्त विद्यालय खोले जाने से संबंधित है। इस योजना के अंतर्गत वंचित वर्ग की उन बालिकाओं को कक्षा-छ: से आठ तक की आवासीय शिक्षा दी जाती है, जिनका स्कूल में कभी नामांकन ही नहीं हुआ या जिन्होंने किन्हीं कारणों से स्कूल जाना छोड़ दिया हो।[1] यह योजना शैक्षिक रूप से पिछड़े ऐसे विकास खंडों में लागू की जाती है जहाँ वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता की दर राष्ट्रीय औसत से कम और लैंगिक भेदभाव का स्तर राष्ट्रीय औसत से ज़्यादा है। ऐसे विकास खंडों में कम महिला साक्षरता वाले तथा स्कूल न जानेवाली अधिकतर बालिकाओं वाले जनजातीय क्षेत्रों में ये विद्यालय खोले जाते हैं। यह योजना मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सहयोग से 2004 में शुरू की गई, जो कि सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत संचालित की जाती है।[2]

उत्तर प्रदेश में कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना वर्ष 2004-05 से संचालित की जा रही है। यह योजना प्रदेश में शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े उन 680 विकास खंडों में चलाई जा रही है, जहाँ महिला साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत (46.13 प्रतिशत) से कम है तथा पुरूषों और महिलाओं की साक्षरता दरों का अंतर्राष्ट्रीय औसत (21.59 प्रतिशत) से अधिक है।[3] प्रदेश में वर्तमान समय में लगभग 450 कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय चल रहे हैं। इनमें लगभग तीस हज़ार बालिकाएँ शिक्षा ग्रहण

* विभागाध्यक्ष (बी.एड.) हीरालाल यादव, बालिका डिग्री कालेज, सरोजनी नगर, लखनऊ

कर रही हैं।[4]

नि:संदेह भारत के सामाजिक परिवेश में यह एक लाभकारी योजना है। भारत में जहाँ स्त्री लंबे समय से शिक्षा से वंचित रही है, वहाँ इसके दुष्प्रभाव आज भी मौजूद हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् आधुनिकीकरण की प्रक्रिया तथा तीव्र आर्थिक विकास के साथ देश की बालिकाओं की दशा में सुधार हुआ है। शहरी क्षेत्रों के मध्यम और उच्च वर्ग में वे पुरुषों के साथ बराबरी का दर्ज़ा भी हासिल कर पा रही हैं, किंतु यह तो एक ऊपरी आवरण भर है। नीचे की परतें अभी भी नम और कसैली ही हैं। दूरस्थ ग्रामीण अंचलों एवं वंचित वर्ग की बालिकाओं की दशा आज भी समाज में बड़ी शोचनीय है। इस वर्ग की बालिकाओं को ढेरों सामाजिक कुरीतियों के बीच जीवनयापन करना पड़ रहा है। शिक्षा प्राप्ति के अवसर उपलब्ध हो पाना उनके लिए एक स्वप्न के समान है। परिवार तथा आस-पास के सामाजिक वातावरण में लड़के-लड़की में भेद किया जाना आम बात है। बड़ी संख्या में लड़कियों का कार्यक्षेत्र घरों के भीतर ही सीमित है और वे शिक्षा के अधिकार से वंचित हैं।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों ने उन्हें एक ऐसा आश्रय दिया है, जहाँ ये बालिकाएँ सामान्य सामाजिक धारा के साथ अपने-आप को जोड़ पा रही हैं। ये विद्यालय आवासीय होने के कारण जहाँ उन्हें शिक्षा प्रदान कर रहे हैं, वहीं एक स्वस्थ वातावरण भी उपलब्ध करा पा रहे हैं, जिससे इन बालिकाओं के सोचने-समझने का नज़रिया व्यापक हो सके। वे ऊँचा उठने के सपने देख सकें एवं उन्हें साकार करने के प्रयास कर सकें।

कस्तूरबा गांधी विद्यालयों की सीमाएँ

इस संदर्भ में ध्यान दें कि क्या हम वंचित वर्ग की इन बालिकाओं को कक्षा-8 तक की शिक्षा प्रदान करके उनके जीवन को सही मायने में दिशा दे पा रहे हैं। सही तौर पर देखा जाए तो नहीं। कक्षा-8 तक की शिक्षा ग्रहण करने के बाद ये बालिकाएँ न तो किसी रोज़गार को अपनाने के लिए तैयार हो पाती हैं और न ही इन्हें कोई ऐसी स्तरीकृत शैक्षिक उपलब्धि का प्रमाण पत्र प्राप्त हो पाता है, जो इन्हें शैक्षिक उपलब्धि की दृष्टि से कोई स्थायित्व दे सके। कक्षा-8 पास करने के पश्चात् कक्षा-9 में प्रवेश की हकदार इन किशोरी छात्राओं को प्राय: कहीं बाहर जाकर पढ़ सकने के अवसर प्राप्त नहीं हो पाते और वे अपने घरों के भीतर अपनी पुरानी जिंदगी में रच-बसकर जल्द ही उसी सीढ़ी पर आ खड़ी होती हैं, जहाँ से उन्होंने कस्तूरबा गांधी विद्यालयों में प्रवेश लिया था। आगे पढ़ाई के अवसर न मिल पाने से पढ़ी गई विषयवस्तु से नाता टूटते देर नहीं लगती।

अत: यह अति आवश्यक प्रतीत होता है कि कक्षा-8 तक शिक्षा प्राप्त इन छात्राओं की शिक्षा को आगे जारी रखते हुए उन्हें कम- से-कम कक्षा-10/हाईस्कूल तक की शिक्षा अवश्य दी जाए। हाईस्कूल स्तर का सम्मानजनक प्रमाण पत्र जहाँ उन्हें आत्मविश्वास देगा, वहीं उनके अभिभावक भी कुछ हद तक गौरवान्वित हो सकेंगे कि बिटिया ने हाईस्कूल स्तर का प्रमाण पत्र हासिल किया है। कुछ हद तक इन

बालिकाओं को एक नई दिशा भी प्राप्त हो सकेगी। कक्षा-8 के पश्चात् 2 वर्ष की यह शिक्षा उनके लिए इसलिए भी आवश्यक है कि शारीरिक मानसिक विकास की दृष्टि से किशोरावस्था की यह आयु बड़ी ही संवेदनशील होती है। इन वर्षों को सही और सकारात्मक मार्गदर्शन प्राप्त होने पर इनके जीवन की दिशा भी सकारात्मक पक्ष की ओर मुड़ सकती है।

भारत के ग्रामीण परिवेश में प्रायः देखा जाता है कि 13-14 आयु वर्ग तक आते-आते बालिकाओं पर उनके अभिभावक तमाम तरह की बंदिशें लाद देते हैं। कस्तूरबा गांधी विद्यालयों में अध्ययनरत बालिकाओं की दृष्टि से इस दशा से उत्पन्न समस्या को देखें। कक्षा-8 तक शिक्षा प्राप्त करके अपने घरों को लौटनेवाली बालिकाओं को भी उनके घरों में बंद होते देर न लगेगी, जबकि यदि ये बालिकाएँ एक बार घरों से निकलकर अपनी शिक्षा प्रारंभ कर चुकने की स्थिति में कक्षा-8 के पश्चात् भी विद्यालयों में बनी रहें तो उनके अभिभावकों की बंदिशें उन तक न पहुँच सकेंगी।

कस्तूरबा गांधी विद्यालयों को क्रमोन्नत करने के प्रस्ताव की सार्थकता-

प्रसन्नता का विषय यह है कि बालिकाओं की इन्हीं समस्याओं को ध्यान में रखते हुए उत्तर प्रदेश में संचालित किए जा रहे कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों को क्रमोन्नत कर हाईस्कूल स्तर तक करने का प्रस्ताव रखा गया है। माध्यमिक शिक्षा विभाग का यह प्रस्ताव मंजूरी के लिए कैबिनेट भेजा जाएगा।[5] कैबिनेट द्वारा यह प्रस्ताव स्वीकृत हो जाने की दशा में ये विद्यालय सही रूप में अपनी उपयोगिता साबित कर सकेंगे। कस्तूरबा गांधी विद्यालयों में अध्ययनरत तमाम बालिकाओं की शिक्षा बीच में न छूट सकेगी। ये बालिकाएँ अपनी शिक्षा एक सम्मानजनक स्तर तक जारी रख सकेंगी। दो वर्ष की अवधि तक अपनी शिक्षा जारी रख कर ये बालिकाएँ अवश्य ही और अधिक परिपक्व एवं समझदार हो सकेंगी और उनमें अपनी शिक्षा और जीवन की विभिन्न समस्याओं के प्रति उचित निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो सकेगा।

कक्षा-8 की छात्राएँ प्रायः 12-13 आयु वर्ग की होती है और अपने अभिभावकों के निर्णयों को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेती हैं। इस बात की पूरी संभावना है कि हाईस्कूल तक शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात् ये बालिकाएँ शारीरिक तथा मानसिक रूप से इतनी परिपक्व हो सकेंगी कि अपने अभिभावकों के निर्णय को ज्यों का त्यों स्वीकार नहीं करेंगी और सही निर्णयों के प्रति उनका समर्थन प्राप्त करने का प्रयास कर सकेंगी। कुल मिलाकर यह स्पष्ट होता है कि माध्यमिक शिक्षा विभाग द्वारा कस्तूरबा गांधी विद्यालयों को उच्चीकृत कर हाईस्कूल तक किए जाने का प्रस्ताव बड़ा ही प्रशंसनीय है। इन्हें शीघ्रातिशीघ्र लागू करने के प्रयास किए जाने चाहिए।

संदर्भ-

1. यूनुस एस. एम. तथा सिंह कर्ण (2007)- उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, गोविंद

प्रकाशन, लखीमपुर खीरी, पृ. 32
2. यादव मोना (2009) – कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय – बालिका शिक्षा के लिए सार्थक पहल, प्राथमिक शिक्षक, एन. सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली। पृ. 10
3. दैनिक जागरण (2009) – कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों के उच्चीकरण करने का प्रस्ताव, दैनिक समाचार पत्र, जागरण प्रकाशन, लखनऊ, 2 नवंबर, पृ. 9
4. – वही – पृ. 9
5. – वही – पृ. 9

❑❑❑

10

लैंगिक संवेदनशीलता की दृष्टि से भोपाल के सहशिक्षा मदरसों का शोध अध्ययन

सुषमा जयरथ*

ख़दीजा सिद्दीकी**

यह लेख भोपाल ज़िले के सहशिक्षा मदरसों पर आधारित है, जिन्हें मध्य प्रदेश राज्य के मदरसा बोर्ड से मान्यता प्राप्त है। ये मदरसे सर्वशिक्षा अभियान से भी जुड़े हुए हैं। प्रस्तुत लेख के माध्यम से यह दर्शाने का प्रयत्न किया जा रहा है कि भोपाल के सहशिक्षा मदरसे और उनके पाठ्यक्रम की लैंगिक दृष्टि से वर्तमान स्थिति क्या है। साथ ही इन मदरसों के छात्र और छात्राओं की लैंगिक संवेदनशीलता के संदर्भ में सोच एवं विचारों का अध्ययन कर विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

परिचय

मक़तब मदरसों के पाठ्यक्रमों का यह शोध अध्ययन मुख्यतः लैंगिक परिप्रेक्ष्य पर आधारित है, जिसके मुख्य उद्देश्यों में मक़तब और मदरसों में पढ़ने वाले छात्र/छात्राओं के नामांकन, मक़तब और मदरसे की स्थिति, लडके एवं लड़कियों के शिक्षा त्यागने (ड्रॉपआउट) के कारण, अध्यापकों, छात्र तथा छात्राओं के बीच अंतःक्रियाओं को जानना, तथा पाठ्यक्रम का विश्लेषण करना आदि सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त सभी पणधारियों (स्टेकहोल्डर्स) की लैंगिक दृष्टि से सोच एवं अभिवृत्ति को समझना भी शामिल है। मदरसों के धार्मिक पाठ्यक्रम को जानना और मुस्लिम लड़कियों की लैंगिक समानता तथा उनके सशक्तिकरण के संबंध में जानना कि ये मदरसे उनके उत्थान और विकास के लिए क्या कर रहे हैं, भी इस शोध में शामिल है, जो कि इस लेख के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

अनुसंधान तकनीकः-

प्रस्तुत शोधकार्य प्राथमिक स्रोत के गुणात्मक और मात्रात्मक आँकड़ों का मिश्रण है। शोधकार्य करते समय विभिन्न प्रकार की विचारधाराओं तथा स्तरों पर आधारित लैंगिक दृष्टिकोण से मदरसों का सर्वेक्षण किया गया तथा विभिन्न पणधारियों (स्टेकहोल्डर्स) की सोच को जानने का प्रयत्न किया गया। इसलिए मध्य प्रदेश मदरसा बोर्ड से संबंधित एवं सर्वशिक्षा अभियान से जुड़े जिन 6 मदरसों का इस शोध अध्ययन के द्वारा नीचे विवरण दिया जा रहा है, वे सभी मदरसे प्रारंभिक स्तर कक्षा 8 तक हैं एवं इस प्रकार हैं–

* प्रोफ़ेसर एवं मुख्य निरीक्षक, महिला अध्ययन विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

** कनिष्ठ परियोजना अध्येता, महिला अध्ययन विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

क्र.सं.	मदरसों का नाम	पता
1	मदरसा रहमानिया	नवाब कॉलोनी, वार्ड नं॰ 66, भोपाल
2	मदरसा नैसेन्ट दीनियात	म.नं॰ 38, श्रमदान रोड, पुल पातरा, बरखेड़ी, भोपाल
3	बुष्टारा दारूल उलूम	आरिफ नगर, गली नं॰8, भोपाल
4	मदरसा तालीमुल कुरआन	53, चटाई पुरा, बुधवारा, भोपाल
5	मदरसा दीनियात फ़देहा	793, इन्दिरा नगर, टील जम्पल पुरा रोड, भोपाल
6	फ़लाह दारैन दारूल उलूम	ऐशबाग स्टेडियम, भोपाल

उपरोक्त मदरसों में अंतक्रिया, विवेचन तथा अवलोकन के लिए विभिन्न प्रकार की प्रश्नावली सूचियों का प्रयोग किया गया। ये सूचियाँ सभी पणधाारियों जैसे छात्र/छात्राओं से लेकर शिक्षकों, मुख्य शिक्षकों तथा सामुदायिक प्रबंधकों तक के लिए बनाई गई, परंतु इस लेख में केवल छात्र/छात्राओं की प्रश्नावली सूचियों का ही विवरण दिया जा रहा है।

साहित्य पुनरावलोकन -

यद्यपि मदरसों पर पहले भी विभिन्न शोध कर्त्ताओं, जैसे- योगिंदर सिकंद, एम. शोएब अंसारी, असगर अली इंजीनियर तथा एम. अख्तर सिद्दीकी द्वारा शोधकार्य किया जा चुका है, परंतु मदरसों के संदर्भ में लैंगिक दृष्टिकोण एवं लैंगिक संवेदनशीलता की दृष्टि से अब तक कुछ अधिक कार्य नहीं हुआ है। फ्राँस मैरी जूले विंकलमैन ने दिल्ली के एक लड़कियों के मदरसे पर अपना शोधकार्य किया है। इसके द्वारा विंकलमैन ने यह समझाने की कोशिश की है कि मदरसों में लड़कियों को किस प्रकार की शिक्षा दी जाती है तथा लड़कियाँ शिक्षा ग्रहण करने के बाद इस्लाम की किस प्रकार व्याख्या करती हैं। अब कुछ शोधकर्त्ता इस संबंध में कार्य करने के लिए जागरूक हो रहे हैं।

मदरसों की स्थापना तथा छात्रों के नामांकन के संबंध में -

यद्यपि भोपाल में अधिकतर सहशिक्षा मदरसों की स्थापना 1995 के बाद हुई है, परंतु मदरसा दीनियात एकमात्र ऐसा मदरसा है, जिसकी स्थापना 1962 में हुई थी। पिछले 25 वर्षो से यह मदरसा मध्य प्रदेश राज्य बोर्ड से संबंधित था, लेकिन सन् 2008 से यह मध्यप्रदेश मदरसा बोर्ड से जुड़ गया है। मदरसा दीनियात फ़देहा की स्थापना 1999 में हुई थी। मदरसा बुशरा दारूल उलूम की स्थापना भी 1999 में हुई थी। मदरसा नैसेंट दीनियात 2002, मदरसा रहमानिया

1999 में और मदरसा फ़लाह दारैन दारूल उलूम 1990 में स्थापित हुआ था।

भोपाल में सहशिक्षा मदरसों की स्थापना तथा छात्रों का नामांकन निम्न सारणी में दर्शाया गया है -

क्रम संख्या	मदरसों के नाम	स्थापना का वर्ष	मार्च 2009 के अनुसार नामांकन		
			लड़के	लड़कियाँ	कुल
1	मदरसा दीनीयात	1962	50	75	125
2	मदरसा बुशरा				
	दारूल उलूम	1999	60	140	200
3	मदरसा				
	दीनीयात फ़ादेहा	1999	30	70	100
4	मदरसा रहमानिया	1999	80	160	240
5	फ़लाह दारैन				
	दारूल उलूम	1990	300	500	800
6	मदरसा नैसेन्ट दीनीयात	2002	75	75	150

उपरोक्त सूची में दर्शाए गए नामांकन से पता चलता है कि भोपाल के सभी सहशिक्षा मदरसों में लड़कों से अधिक लड़कियों की संख्या है। नामांकन के संबंध में इन मदरसों के सभी मुख्य शिक्षकों का यह कहना है कि छात्रों की संख्या में कमी और बढ़ोतरी होती रहती है, लेकिन लड़कियों की संख्या सदैव लड़कों से अधिक ही रहती है।

मदरसों का पाठ्यक्रम –

भोपाल के सभी सहशिक्षा मदरसों का पाठ्यक्रम मध्यप्रदेश मदरसा बोर्ड के पाठ्यक्रम पर आधारित है, अर्थात् मदरसों में मदरसा बोर्ड का ही पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है। मदरसों का अपना कोई पाठ्यक्रम नहीं है। इसलिए धार्मिक शिक्षा भी निम्न स्तर तक ही दी जाती है। इस मदरसे के पाठ्यक्रम में कुरआन और हदीस के अतिरिक्त हिंदी, अँग्रेज़ी, उर्दू, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, गृहविज्ञान, गणित तथा कंप्यूटर आदि विषय शामिल हैं। एक विशेष बात यह है कि भोपाल के सभी सहशिक्षा मदरसों में हिंदी माध्यम के अंतर्गत शिक्षा दी जाती है। इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश राज्य बोर्ड की पुस्तकें भी मदरसा पाठ्यक्रम में शामिल हैं।

सूचियों का विश्लेषणात्मक विवरण

सर्वेक्षण के दौरान हमने जिन प्रश्नावलियों तथा साक्षात्कार सूचियों का छात्र/छात्राओं के लिए प्रयोग किया उनका विश्लेषण इस प्रकार है –

1. क्या आपकी आगे पढ़ने की इच्छा है?

इस प्रश्न के उत्तर में सभी छात्रों ने हाँ में उत्तर दिया। इससे पता चलता है कि मदरसों में शिक्षा ग्रहण करने वाले सभी 100 प्रतिशत बच्चे पढ़ने के इच्छुक हैं।

2. क्या आपके माता-पिता साक्षर हैं? यदि 'हाँ' तो उनका शैक्षिक स्तर क्या है?

इस प्रश्न से हमें पता चला कि मदरसे में पढ़ने वाले छात्रों की 25 प्रतिशत माताएँ पढ़ी हुई हैं और लगभग 32 प्रतिशत पिता पढ़े हुए है। जो माताएँ पढ़ी हुई हैं, उनमें से लगभग 12 प्रतिशत हाई स्कूल तक शिक्षित हैं तथा 12 प्रतिशत ने प्रारंभिक स्तर की शिक्षा ग्रहण की हुई है। इसी प्रकार 14 प्रतिशत पिता हाई स्कूल तक शिक्षित हैं, 10 प्रतिशत प्रारंभिक स्तर तक शिक्षित हैं तथा 8 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक हैं। लगभग 75 प्रतिशत माताएँ अशिक्षित हैं तथा 68 प्रतिशत पिता अशिक्षित हैं।

3. बड़े होकर आप कौन-सा कैरियर अपनाना चाहते हैं?

इस प्रश्न के उत्तर में लगभग 36 प्रतिशत बच्चे स्कूल शिक्षक बनना चाहते हैं, 16.5 प्रतिशत मोआल्लिमा या मौलवी बनना चाहते हैं, 14.5 प्रतिशत वकील बनना चाहते हैं, 5 प्रतिशत इंजीनियर बनना चाहते हैं, 10 प्रतिशत कंप्यूटर पेशेवर बनना चाहते हैं, 5 प्रतिशत डिज़ाइनर

बनना चाहते हैं। इस प्रकार हमें पता चला कि मदरसों में पढ़ने वाले बच्चे भी अपने भविष्य को लेकर काफ़ी जागरूक और उत्साहित हैं। परंतु अधिकांश लड़कियाँ मोआल्लिमा अथवा स्कूल शिक्षक ही बनना चाहती हैं। इससे हमें पता चलता है लड़कियाँ अभी इतनी जगरूक नहीं हुई हैं कि वे वकील, डॉक्टर या कोई अन्य तकनीकी कैरियर के बारे में सोचें।

4. आपके अनुसार आपके मकतब/मदरसे में शिक्षक तथा अन्य कर्मचारियों द्वारा किसे वरीयता दी जाती है?

इस प्रश्न के उत्तर में बच्चों का कहना है कि 52.5 प्रतिशत लड़कियों को तथा 37.5 प्रतिशत दोनों को प्रधानशिक्षक के द्वारा वरीयता दी जाती है, 10 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। शिक्षक के द्वारा 52.5 प्रतिशत लड़कियों को तथा 37. 5 प्रतिशत दोनों को वरीयता दी जाती है तथा 10 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। दफ्तरी कर्मचारियों के द्वारा 52.5 प्रतिशत लड़कों को तथा 37.5 प्रतिशत दोनों को वरीयता दी जाती है और 10 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस उत्तर से हम यह समझ सकते हैं कि मदरसों में लड़कियों के प्रति प्रधानशिक्षकों तथा शिक्षकों का विचार ठीक है, वे दोनों ही लड़कियों की वरीयता की बात करते हैं, परंतु दफ्तरी कर्मचारियों के संबंध में लड़कियों के प्रति हम लैंगिक विभिन्नता को देख सकते हैं।

5. क्या आपने कक्षा के दौरान शिक्षक द्वारा लड़कियों के प्रति भेदभाव का अनुभव किया है?

इस प्रश्न के उत्तर में 95 प्रतिशत ने उत्तर दिया कि उन्होंने शिक्षकों द्वारा लड़कियों के प्रति भेदभाव का अनुभव नहीं किया है तथा 5 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस उत्तर से हम यह समझ सकते हैं कि भोपाल के सभी सहशिक्षा मदरसे लैंगिक भेदभाव से मुक्त हैं।

6. आपके शिक्षण संस्थान में आपके या आपके किसी मित्र के साथ यदि कोई बदतमीज़ी/शोषण/दुर्व्यवहार की घटना हुई हो, तो उल्लेख करें?

इस प्रश्न के उत्तर में 30 प्रतिशत बच्चों ने नहीं कहा और 70 प्रतिशत बच्चों ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न का उत्तर यह दर्शाता है कि भोपाल के सभी सहशिक्षा मदरसों में छात्र और छात्राओं के साथ किसी प्रकार के शोषण तथा दुर्व्यवहार आदि की घटना कभी घटित नहीं हुई है। अत: इस संबंध में सहशिक्षा मदरसों का माहौल स्वच्छ प्रतीत होता है।

7. कक्षा के दौरान शिक्षक द्वारा लड़की और लड़के की कितनी बार प्रशंसा की जाती है?

इस प्रश्न के उत्तर में 87.5 प्रतिशत बच्चों (लड़कियों और लड़कों दोनों) ने कहा कि उनका कक्षा में एक से अधिक बार उत्साहवर्धन किया जाता है तथा 12.5 प्रतिशत

ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से हम यह समझ सकते हैं कि मदरसों के बच्चों के साथ शिक्षकों द्वारा अच्छा व्यवहार किया जाता है।

8. शिक्षक द्वारा लड़कियों और लड़कों को कितनी बार दंडित किया जाता है?

इस प्रश्न के बारे में बच्चों ने कोई भी उत्तर नहीं दिया। इससे यह विदित होता है कि या तो बच्चे डरे हुए हैं या वे अपनी बात कहने में सक्षम नहीं हैं।

9. मकतब/मदरसे में खेलकूद, सांस्कृतिक, क्रियात्मक तथा अकादमिक गतिविधियों के दौरान शिक्षक द्वारा किसे (छात्र या छात्रा) विशेष सम्मान या वरीयता दी जाती है?

इस प्रश्न के उत्तर में 20 प्रतिशत लड़कियों के पक्ष में, 5 प्रतिशत लड़कों के पक्ष में, 65 प्रतिशत दोनों के पक्ष में शिक्षक द्वारा खेलकूद में वरीयता दी जाती है, 5 प्रतिशत ने कहा कि किसी को वरीयता नहीं दी जाती है तथा 5 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। सांस्कृतिक गतिविधियों में 5 प्रतिशत लड़कियों के पक्ष में, 22.5 प्रतिशत लड़कों के पक्ष में तथा 65 प्रतिशत दोनों को वरीयता दी जाती है, 5 प्रतिशत ने कहा कि किसी को वरीयता नहीं दी जाती है तथा 2.5 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। क्रियात्मक गतिविधियों के बारे में 5 प्रतिशत लड़कियों को, 22.5 प्रतिशत लड़कों को, 65 प्रतिशत दोनों को वरीयता दी जाती है, 2.5 प्रतिशत ने कहा कि किसी को वरीयता नहीं दी जाती है और 2.5 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। अकादमिक गतिविधियों में 22 प्रतिशत लड़कियों को, 5 प्रतिशत लड़कों को तथा 65 प्रतिशत दोनों को शिक्षक द्वारा वरीयता दी जाती है, 5 प्रतिशत ने कहा, 'कोई नहीं', अर्थात् किसी को वरीयता नहीं दी जाती है तथा 2.5 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न से हम यह समझ सकते हैं कि लड़कियों के संबंध में सांस्कृतिक तथा क्रियात्मक गतिविधियों के बारे में एक रूढ़िवादी मानसिकता बनी हुई है, केवल अकादमिक गतिविधियों के बारे में लड़कियों को 22.5 प्रतिशत प्राथमिकता दी जाती है, इस दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि छात्रों की दृष्टि में शिक्षकों की सोच के अनुसार लड़कियाँ शिक्षा के क्षेत्र में ही वरीयता प्राप्त कर सकती हैं।

10. आगंतुकों (मेहमानों) के घर आने पर चाय कौन बनाता है?

इस प्रश्न के उत्तर में 2.5 प्रतिशत बच्चों ने अपनी माँ को बताया कि मेहमानों के घर आने पर चाय बनाती हैं, 5 प्रतिशत बच्चों ने दोनों (लड़की और लड़का) को बताया, 15 प्रतिशत बच्चों ने कोई उत्तर नहीं दिया तथा 77.5 प्रतिशत बच्चों ने लड़कियों को बताया कि मेहमानों के घर आने पर चाय लड़कियाँ ही बनाती हैं। इस प्रश्न के उत्तर से हम यह समझ सकते हैं कि 77.5 प्रतिशत एक बड़ी संख्या है, जो रूढ़िवादी मानसिकता से ग्रस्त है, जो यह मानती है कि चाय बनाने का काम लड़कियों का है तथा उनको ही करना चाहिए। इस प्रकार

इस प्रश्न के उत्तर से हम लैंगिक भेदभाव को अच्छी तरह आँक सकते हैं।

11.क्या आप अपने घर-परिवार में लड़के-लड़कियों के मध्य किसी प्रकार के भेदभाव का अनुभव करते हैं?

इस प्रश्न के उत्तर में भोजन के बारे में 7.3 प्रतिशत बच्चों का उत्तर ''हाँ'' में था, 60.75 प्रतिशत बच्चों का उत्तर ''नहीं'' में था तथा 25 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस उत्तर से हम समझ सकते हैं कि कुछ घरों को छोड़कर लड़की और लड़के के बीच भोजन के बारे में भेदभाव नहीं होता है।

कपड़े के बारे में 75 प्रतिशत ने 'नहीं' कहा तथा 25 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। कपड़े के संबंध में भी यह प्रतीत होता है कि बहुधा परिवारों में लड़की और लड़के के मध्य भेदभाव नहीं होता है।

कॉपी और किताब का खर्च तथा ट्यूशन की फीस के प्रश्न के उत्तर में 10 प्रतिशत बच्चों ने 'हाँ' कहा, 40.75 प्रतिशत बच्चों ने 'नहीं' कहा तथा 35 प्रतिशत बच्चों ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से भी हम यह समझ सकते हैं कि कुछ परिवारों को छोड़कर लड़की और लड़के के मध्य भेदभाव की भावना नहीं है।

खेलकूद के बारे में 30 प्रतिशत बच्चों का उत्तर 'हाँ' में था, 16.5 प्रतिशत बच्चों ने 'नहीं' में उत्तर दिया, 22.5 प्रतिशत ने कहा कि कभी-कभी भेदभाव होता है और 30 प्रतिशत बच्चों ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से हम यह समझ सकते हैं कि खेलकूद के बारे में अधिकांश परिवारों में लड़की और लड़के के मध्य भेदभाव होता है। लड़कियों की तुलना में लड़कों को खेलकूद के बारे में प्राथमिकता दी जाती है।

पढ़ाई के अलग-अलग कमरे के प्रश्न पर 12.5 प्रतिशत बच्चों ने 'हाँ' कहा, 55 प्रतिशत बच्चों ने 'नहीं' कहा तथा 32.5 प्रतिशत बच्चों ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से ऐसा प्रतीत होता है कि लड़की और लड़के के मध्य पढ़ाई के लिए अलग स्थान के संबंध में परिवारों के द्वारा भेदभाव नहीं किया जाता है। इसका एक कारण यह भी है कि मदरसों में पढ़ने वाले कुछ बच्चों को छोड़कर बड़ी संख्या में बच्चे निर्धन परिवारों से ही होते हैं, जिनके घरों में पढ़ने के लिए अलग कमरों का प्रबंध नहीं होता है। अत: वे घरों में परिवार के साथ बैठकर ही अपनी पढाई करते हैं।

घरेलू कामकाज के बारे में 45 प्रतिशत का उत्तर 'हाँ' में था, 20 प्रतिशत का उत्तर 'नहीं' में था तथा 35 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से हम पूर्ण रूप से परिवारों के द्वारा लड़की व लड़के के मध्य भेदभाव को समझ सकते हैं। अधिकांश परिवारों में यह रूढ़िवादी मानसिकता बनी हुई है कि घरेलू काम लड़कियों का है, उनको ही करना चाहिए तथा लड़के घरेलू कामकाज से स्वतंत्र हैं।

बाज़ार के कामकाज के बारे में 20 प्रतिशत बच्चों का उत्तर 'हाँ' में था, 45 प्रतिशत बच्चों का उत्तर 'नहीं' में था तथा 35 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से ऐसा

प्रतीत होता है कि बाज़ार के कामकाज के बारे में लगभग आधे परिवारों में लड़की और लड़के को समानता दी जाती है परंतु कुछ परिवारों में भेदभाव भी किया जाता है।

मनोरंजन के अवसर अथवा टी.वी., सिनेमा के प्रश्न के उत्तर में 25 प्रतिशत बच्चों ने 'हाँ' में उत्तर दिया, 40 प्रतिशत ने 'नहीं' में उत्तर दिया तथा 35 प्रतिशत ने कोई नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से हम समझ सकते हैं कि 25 प्रतिशत परिवारों में मनोरंजन के प्रश्न पर भेदभाव होता है, परंतु 40 प्रतिशत भी एक बड़ी संख्या है, जिससे यह प्रतीत होता है कि इस संबंध में लड़की और लड़के के मध्य भेदभाव नहीं होता है।

पिकनिक अथवा बाह्य भ्रमण के बारे में 25 प्रतिशत बच्चों ने 'हाँ' कहा, 40 प्रतिशत बच्चों ने 'नहीं' कहा तथा 35 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से हम यह समझ सकते हैं कि इस संबंध में अधिकतर परिवारों में लड़की और लड़के के मध्य भेदभाव नहीं होता है।

खरीदारी, बाह्य भ्रमण, सिनेमा, फिल्म देखना, कैरियर के चयन आदि प्रश्न के उत्तर के संबंध में 12.5 प्रतिशत बच्चों का उत्तर 'हाँ' में था, 37.5 प्रतिशत बच्चों का उत्तर 'नहीं' में था तथा 35 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से हम समझ सकते हैं कि कुछ परिवारों में लड़की और लड़के के मध्य भेदभाव होता है तथा अधिकतर परिवारों में भेदभाव नहीं होता है।

निर्णय लेने की गतिविधियों में भागीदारी के प्रश्न के उत्तर में 25 प्रतिशत बच्चों ने 'हाँ' में उत्तर दिया, 42.5 प्रतिशत बच्चों ने 'नहीं' में उत्तर दिया, 2.5 प्रतिशत बच्चों ने कहा कि कभी-कभी भेदभाव होता है तथा 30 प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न के उत्तर से हम यह समझ सकते हैं कि 25 प्रतिशत परिवारों में इस संबंध में भेदभाव नहीं होता है।

12. आँकड़ों की दृष्टि से इस प्रश्न को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(i) क्या आप इससे सहमत हैं कि शिक्षा प्रदान करने में लड़के-लड़कियों के मध्य भेदभाव होना चाहिए? क्या उनके खाने-पीने में भेदभाव होना चाहिए? क्या दोनों को समान दायित्व एवं ज़िम्मेदारियाँ दी जानी चाहिएँ?

उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर में 95 प्रतिशत बच्चों ने कहा कि इन संबंधों में लड़की और लड़के के

मध्य किसी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए तथा पाँच प्रतिशत ने कोई उत्तर नहीं दिया। उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर यह समझाता है कि लैंगिक विभेदीकरण के संबंध में मदरसों के छात्र लगभग रूढ़िवादी मानसिकता से स्वतंत्र हैं।

(ii) **क्या उनमें स्वतंत्रता प्रदान करने के सिलसिले में भेदभाव होना चाहिए? क्या उनके लिए खेलकूद का समय देने में भेदभाव होना चाहिए? क्या दोनो लिंगों के प्रति भेदभाव किया जाना मानवाधिकार का मुद्दा है?**

इन प्रश्नों के उत्तर में स्वतंत्रता, खेलकूद तथा मानवाधिकार के संबंध में 30 प्रतिशत बच्चों का मानना है कि दोनों लिंगों के मध्य भेदभाव होना चाहिए, जबकि 70 प्रतिशत बच्चों का मानना है कि इन संबंधों में दोनों लिंगों के मध्य भेदभाव नहीं होना चाहिए। अत: इन प्रश्नों का उत्तर काफ़ी हद तक रूढ़िवादी मानसिकता से स्वतंत्र है, परंतु 30 प्रतिशत भी स्वयं में बड़ी संख्या है, जो दोनों लिंगों के मध्य भेदभाव को स्वीकार भी करती है।

(iii) **क्या दोनों किसी कार्य को एक समान कर सकते हैं? क्या बच्चों के प्रति भेदभाव की प्रवृति के लिए मूल रूप से माता-पिता ही ज़िम्मेदार हैं? आपके अनुसार स्कूल या घर-परिवार में से लड़के-लड़कियों के प्रति भेदभाव के लिए मूल रूप से कौन ज़िम्मेदार हैं?**

इन प्रश्नों के उत्तर में 50 प्रतिशत बच्चे दोनों लिंगों के मध्य भेदभाव को स्वीकार करते हैं तथा यह भी मानते हैं कि घर, परिवार, माता और पिता तथा स्कूल के द्वारा भी दोनों लिंगों के मध्य भेदभाव की भावना पाई जाती है, जबकि 50 प्रतिशत बच्चे इस बात का निषेध करते हैं। इन प्रश्नों का उत्तर जितना रूढ़िवादी मानसिकता से स्वतंत्र है, उतना ग्रस्त भी है।

(iv) **क्या दोनों एक ही प्रकार के व्यवसाय अपना सकते हैं? क्या आदमी और औरत को समान वेतन दिया जाना चाहिए? क्या महिलाएँ बच्चों की देखरेख करने में पुरुषों से बेहतर होती है? क्या आज के समाज में आदमी और औरत के लिए हर क्षेत्र में समान अवसर उपलब्ध हैं?**

इन प्रश्नों के उत्तर में 95 प्रतिशत बच्चों का मानना है कि मर्द और औरत को समान वेतन देने के संबंध में भेदभाव नहीं होना चाहिए। घरेलू कामकाज में घर के सभी सदस्यों की

भागीदारी आवश्यक है तथा बच्चों की देखरेख करने में महिलाएँ पुरुषों से बेहतर होती हैं, जबकि 5 प्रतिशत बच्चे इन प्रश्नों के संबंध में नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं। अत: इस प्रश्न का उत्तर लगभग रूढ़िवादी मानसिकता से स्वतंत्र है।

शिक्षा त्यागने (ड्रॉपआउट) के कारण -

यद्यपि सभी सहशिक्षा मदरसे प्रारंभिक स्तर तक ही हैं, परंतु उनमें बच्चों के ड्रॉपआउट की समस्या बनी हुई है। यूँ तो बच्चों के शिक्षा छोड़ने के कई कारण सामने आए हैं, लेकिन एक सबसे मुख्य कारण जो सभी मदरसों के शिक्षक तथा प्रधानाध्यापक मानते हैं, वह यह है कि बच्चों को निर्धनता के चलते अपनी पढ़ाई छोड़नी पड़ती है। इसके अतिरिक्त माता-पिता में सामाजिक जागरूकता की कमी को बताया गया, जिसका प्रभाव लड़कियों की शिक्षा पर अधिक पड़ता है। इसके अतिरिक्त मदरसों के प्रधानाध्यापकों का कहना है कि जितने भी बच्चे मदरसों में शिक्षा ग्रहण करने आते हैं, उनमें से लगभग 80 प्रतिशत अपनी शिक्षा पूर्ण करके ही जाते हैं।

मूल्यांकन

इन मदरसों में सभी विषयों को समान रूप से पढ़ाया जाता है। मदरसा दीनियात फ़ादेहा में एक विशेष बात यह देखने को मिली कि मदरसे की दीवार पर शिवाजी से लेकर विभिन्न धर्मों तथा स्वतंत्रता सेनानियों के चित्र लगे हुए थे। इस मदरसे को हम धर्मनिरपेक्षता का अनूठा उदाहरण कह सकते हैं। इसी प्रकार से अन्य मदरसों में भी हमें इस प्रकार की बातें देखने को मिलीं। चूँकि इन मदरसों में लड़कियों की संख्या अधिक है, इसलिए अधिकतर मदरसों में व्यावसायिक कोर्स भी करवाए जाते हैं। इन सभी उपरोक्त 6 मदरसों में फलाह दारैन दारूल उलूम और बुशरा दारूल उलूम मुख्य हैं तथा इनमें भी बुशरा दारूल उलूम विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। मदरसा बुशरा दारूल के हस्तकौशल तथा अन्य व्यवसायिक कोर्सों में प्रशिक्षण दिया जाता है। यहाँ से प्रशिक्षण कोर्स करने के बाद लड़कियों में आत्मविश्वास भी बढ़ता है, जो कि उनके सशक्तीकरण का एक साधन है।

उपरोक्त विशेषताओं के अलावा इन मदरसों में बहुत-सी कमियाँ भी हैं, जैसे- इन मदरसों में शिक्षकों का मासिक वेतन बहुत कम है। शिक्षकों को 300 रू॰ से लेकर अधिकतर 1000 रू. तक वेतन मिलता है। संसाधनों की दृष्टि से सभी मदरसों की स्थिति बहुत दयनीय है। अधिकांश मदरसे एक बड़े हॉल या अधिकतर दो-तीन कमरों में ही स्थित हैं। सभी मदरसों में शौचालयों की बहुत कमी है, जो कि लड़कियों के ड्रॉपआउट होने का कारण है। इसके अलावा बच्चों के खेलने की सुविधा मदरसा दीनियात के अलावा और कहीं भी नहीं है।

इन सब बातों के अतिरिक्त मदरसों को मदरसा बोर्ड तथा सर्वशिक्षा अभियान से कुछ शिकायतें भी हैं, जैसे कि सभी मदरसों के मुख्य शिक्षकों का कहना है कि मदरसा बोर्ड तथा सर्वशिक्षा अभियान की तरफ़ से सभी योजनाओं की सुविधाएँ नहीं मिल पाती हैं। सर्वशिक्षा अभियान की तरफ़ से केवल दो ही सुविधाएँ मिलती हैं एक पाठ्यपुस्तकों की, दूसरी मिड डे मील की। मदरसा बोर्ड तथा सर्वशिक्षा अभियान की ओर से कभी भी समय पर पाठ्यपुस्तकें नहीं मिल पाती हैं। नया सत्र अप्रैल से शुरू होता है तथा किताबें नवंबर के

महीने में मिलती हैं। इसी प्रकार बच्चों के लिए जो मिडडे मील आता है, वह खाने के योग्य नहीं होता है। उसमें एक-आध बार मरी हुई छिपकली भी निकल चुकी है। इस प्रकार इन मदरसों को मदरसा बोर्ड तथा सर्वशिक्षा अभियान की ओर से बहुत-सी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त आँकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इन मदरसों में पढ़ने वाले सभी बच्चे शिक्षा के प्रति सचेत हैं। अपने कैरियर के प्रति जागरूक हैं लेकिन लैंगिक मुद्दों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का अभी भी समाज में अभाव है। इससे यह भी स्पष्ट है कि छात्रों के परिवार की सोच लड़के और लड़कियों के मध्य भेदभाव करने में विश्वास रखती है। कुछ सीमा तक यह भी अनुभव किया गया कि इस संबंध में छात्र एवं छात्राओं की सोच भी सकारात्मक दृष्टि के अनुकूल कम ही है।

संदर्भ शब्दावली

मौलवी	शिक्षक
मोआल्लिमा	शिक्षिका
हदीस	प्रोफ़ेट मौहम्मद की शिक्षाएँ
उलूम(इल्म का बहुवचन)	विद्या, ज्ञान

विशिष्ट संदर्भ

- असगर अली इंजीनियर, *इस्लाम वुमेन एंड जेंडर जस्टिस,* ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, 2001
- योगिंदर सिकंद, *बैस्टियन ऑफ द बिलहीवर्स: मदरसा एंड इस्लामिक एजुकेशन इन इंडिया,* पेंगिवन इंडिया, 2005
- एम.ज.विंकलमेन, *रीचिंग ऑफ द माइंडस ऑफ यंग मुस्लिम वुमेन गर्ल्स: मदरसा इन इंडिया,* मानक पब्लिकेशंस, 2005
- सुषमा जयरथ, मौ. नूर आलम, *मध्य प्रदेश के मकतब: एक नवीन स्वरूप,* प्राइमरी शिक्षक, जनवरी, 2009
- सुषमा जयरथ,मौ.नूरआलम, *मॉड्रेर्नाइज़ेशन ऑफ एम.पी. मदरसास एंड मकतबस* द मिली गज़ट, 1-15 जनवरी, 2009
- सुषमा जयरथ *'मदरसा एजुकेशन इन इंडिया: द जेंडर पर्सपेक्टिव पेपर प्रेज़ेन्टेड इन द नेशनल सेमीनार ऑन 'इक्विटी एंड एजुकेशन: पॉलिसी:इश्यूस एंड चैलेंजस ऑर्गेनाइज़ड बाई सेंट्रल इंस्ट्रिटयूट ऑफ एजुकेशन (सी.आई.ई.), दिल्ली यूनिवर्सिटी मार्च 5-7, 2009*

❑❑❑

11

बालिका शिक्षा की स्थिति और विकास में समुदाय की सहभागिता का अध्ययन

राजकुमार चावड़ा*

सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत बालिका शिक्षा पर विशेष बल दिया जा रहा हैं इस हेतु अनेक योजना बनाकर क्रियान्वित भी की गई हैं। लेकिन बालिका शिक्षा में तब तक अपेक्षित सुधार नहीं लाया जा सकता, जब तक कि परिवार और समाज में पूर्ण सहयोग न मिले। प्रस्तुत शोध उत्तरप्रदेश के ज्योतिबाफूले नगर ज़िले में बालिका शिक्षा की स्थिति और विकास में समुदाय की सहभागिता का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

बालिका किसी समाज, समुदाय तथा परिवार की महत्वपूर्ण कड़ी होती है, जो बड़ी होकर पत्नी, माता, बहन, मित्र तथा परिवार की आय उपार्जक जैसी अनेक महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाती है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि बालिकाओं की इन भूमिकाओं को निभाने में शिक्षा प्रभावी रूप से मदद कर सकती है, क्योंकि यह उनके साक्षरता कौशल को बढ़ाने के साथ-साथ अंत:करण के सौंदर्य तथा पारिवारिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ाने में सहायक है।

लेकिन दु:ख की बात है कि बालिका का जन्म लेना कभी भी सौभाग्य का सूचक नहीं समझा गया। उसके जन्म से लेकर विवाह तक कोई खुशी नहीं मनाई जाती है। उसकी मृत्यु पर भी विशेष शोक प्रकट नहीं किया जाता है। उसे प्रत्येक दृष्टि से उपेक्षित ही समझा जाता है। शिक्षा का क्षेत्र भी इसमें कोई अपवाद नहीं है। उसके पढ़ने-लिखने के महत्त्व को नहीं स्वीकारा गया। उसे विद्यालय/उच्च विद्यालय में भेजने की बात तो सोची ही नहीं जाती थी।

कुछ समाजसुधारकों के प्रयासों से ही बालिका को शिक्षित करने का प्रयास उन्नीसवीं शताब्दी में प्रारंभ हो पाया। ग्रामीण क्षेत्र के निर्धन तथा वंचित वर्ग के परिवारों में लड़कियों की शिक्षा के बारे में केवल स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही सोचा गया।

संविधान के अनुच्छेद-14 में यह व्यवस्था की गई, कि 6-14 वर्ष तक के सभी बालक-बालिकाओं को बिना किसी भेदभाव के अनिवार्य नि:शुल्क शिक्षा दी जाएगी, परंतु संविधान लागू होने के 60 वर्षों के बाद भी हम यह लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाए। बालिकाओं की शिक्षा पर दुर्गाबाई देशमुख समिति की रिपोर्ट (1959) में बोधगम्य सुझाव दिए गए और एक

* कनिष्ठ अध्येता, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

नीति दस्तावेज़ बनाया गया जो कि पंचवर्षीय योजनाओं को बनाने और लड़के-लड़कियों के लिए समरूप पाठ्यक्रम बनाने की आवश्यकता को निर्देशित करता है। जो इस बात को प्रकाश में लाता है कि लड़कियों की शिक्षा को विशेष समस्या मानकर सुलझाया जाए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में भी इस बात पर बल दिया गया कि बिना किसी लैंगिक भेदभाव के 6-14 वर्ष के सभी बालकों तथा बालिकाओं को अनिवार्य नि:शुल्क शिक्षा दी जाए। अतएव बालिका शिक्षा की विकास प्रक्रिया में भागीदार होने तथा उससे लाभ उठाने योग्य बनाने हेतु प्रयास आवश्यक है। दशोरा एवं शर्मा इस संदर्भ में उचित ही लिखते हैं कि जब स्त्रियाँ शिक्षित होती हैं, तो उनकी निर्भरता स्वत: ही समाप्त हो जाती है। कम-से-कम इससे उनका सर्वांगीण विकास निर्दिष्ट होता है, जो कि राष्ट्र की समृद्धि में सहायक होता है। (दशोरा एवं शर्मा, 2003:40)। "स्त्री के शिक्षित होने से पूरे समाज की तरक्की होती है" (उत्तराखंड की राज्यपाल श्रीमती मार्गरेट अल्वा)। 'महिला योग शिविर' को संबोधित करते हुए इसी संदर्भ में स्वामी रामदेव जी कहते हैं कि 'एक पुरुष को शिक्षा देने से एक आदमी शिक्षित होता है, लेकिन एक स्त्री को शिक्षा देने से पूरा परिवार शिक्षित होता है, जिससे पूरे समाज की तरक्की होती है'-(योग संदेश 2010:56)।

शिक्षा पर सामान्य रूप से उपलब्ध अधिकांश साहित्य और आँकड़े विशेष रूप से उच्च शिक्षा में महिलाओं का यह अनुपात प्रदर्शित करते हैं कि बालिकाएँ शिक्षा से वंचित रहती हैं। पारंपरिक रूप से ही भारतीय समाज में बालिकाओं के लिए औपचारिक शिक्षा को भी अधिक महत्त्व नहीं दिया गया। इस संदर्भ में एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा कराए गए एक अध्ययन में यह तथ्य सामने आया कि 77.6 प्रतिशत अभिभावक अपनी लड़कियों के लिए किसी भी प्रकार की शिक्षा के पक्ष में नहीं थे (एन.सी.ई.आर.टी. -1981: 83)। इस संदर्भ में गोरे ने भी स्पष्ट किया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाएँ, शहरी क्षेत्रों के अनुपात में अधिक स्कूल छोड़ती हैं (गोरे-1982: 34)। ''बालिका शिक्षा के पिछड़ने का प्रमुख कारण माताओं में निम्न साक्षरता अथवा शिक्षा तक पहुँच का न होना पाया जाता है (एन.सी.ई.आर.टी.-1982: 223)। इसके अतिरिक्त शिक्षिकाओं का अभाव, असमृद्ध पाठ्यक्रम तथा बालिकाओं के कार्य, आवश्यकताओं व विद्यालय के समय में तालमेल का अभाव भी बालिकाओं की शिक्षा में कमी का कारण है। (एन.सी.ई.आर.टी.-1981: 81) बालिका शिक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण सामाजिक, आर्थिक कारण है, अभिभावकों का व्यवसाय जो कि बालिकाओं के दाखिले को प्रभावित करता है।

समाज/समुदाय एवं परिवार आदि काल से चली रही संस्थाएँ हैं, जिनके द्वारा बालक-बालिका के व्यवहार और अभिवृत्तियों का निर्माण किया जाता है। पारिवारिक जीवन बालिका के विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है तथा इस कार्य की ज़िम्मेदारी माता-पिता पर होती है। राणे तथा नटराजन (1982) ने अपने अध्ययन में पाया कि माता-पिता, बालक के व्यक्तित्व को दिशा

प्रदान करते हैं। परिवार समाज की मूलभूत इकाई है, जिसमें रहकर बालक-बालिका सामाजिक अन्त:क्रिया, व्यवहार प्रतिभागिता तथा व्यक्तित्व की संरचना का ज्ञान प्राप्त करते हैं।

शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण की समस्या विशेषकर शैक्षिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए ग्रामीण समुदायों में चुनौतीपूर्ण है। इसी चुनौतीपूर्ण कार्य को सफल बनाने के लिए सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत 6-14 वर्ष के सभी बच्चों के लिए 2010 तक उपयोगी एवं सार्थक प्रारंभिक शिक्षा (कक्षा-1 से 8 तक) की व्यवस्था करना तथा समुदाय की सक्रिय सहभागिता के लिए उत्तर प्रदेश में बेसिक अधिनियम 1972 में निहित प्रावधानों के अंतर्गत संशोधित अधिनियम **असाधारण गजट** 5/5/2000 द्वारा प्रत्येक ग्राम पंचायत क्षेत्र में एक समिति गठित है, जो ग्राम शिक्षा समिति कहलाती है, जिसका उद्देश्य सामाजिक, क्षेत्रीय एवं बालक-बालिका भेद को समाप्त करके सभी के लिए शिक्षा उपलब्ध कराना है। इस अभियान की सफलता का ही प्रमाण है कि आज इस योजना के अंतर्गत समस्त भारत के सभी राज्य, ज़िले, प्रखंड एवं गाँव शिक्षा से लाभांवित हो रहे है।

प्रस्तुत शोध लेख, उत्तर प्रदेश के ज्योतिबा फुले नगर ज़िले में बालिका शिक्षा की स्थिति और विकास में समुदाय की सहभागिता का अध्ययन प्रस्तुत करता है। उत्तर प्रदेश वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार देश की सर्वाधिक जनसंख्या 16.80 प्रतिशत के साथ 70 ज़िले के विस्तृत क्षेत्र के इस प्रदेश में पुरुष साक्षरता दर 70.23 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 42.98 प्रतिशत थी। इसी प्रदेश का एक जनपद ज्योतिबा फुले नगर है जिसकी स्थापना 24 अप्रैल 1997 को 2470 वर्ग किमी क्षेत्रफल में हुई थी, जिसकी पुरुष साक्षरता दर 62.57 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 32.56 प्रतिशत थी। इस ज़िले के ब्लॉक हसनपुर में पुरुष साक्षरता दर 49 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 37 प्रतिशत थी, जबकि ब्लॉक गंगेश्वरी की पुरुष साक्षरता दर 41 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 29 प्रतिशत थी। यह राज्य अभी भी शैक्षिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। आज भी लैंगिक मुद्दा यहाँ ज्वलंत है। इसी दृष्टि से उत्तर प्रदेश के इस ज़िले में गाँव के सामान्य वर्ग, पिछड़े वर्ग तथा अनुसूचित जाति की महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक दृष्टि से काफ़ी पिछड़ी हुई हैं। साथ ही गाँव में इन महिलाओं में जागरूकता का भी अभाव है। जागरूक न होने की वजह से गाँव की महिलाएँ पारिवारिक हिंसा का शिकार होती हैं। वे अपनी बच्चियों/लड़कियों की शादी छोटी उम्र में ही कर देने को मजबूर होती हैं। लड़कियों को पढ़ाने में रुचि नहीं ली जाती है और बचपन में ही उनके अभिभावकों द्वारा उन पर घरेलू ज़िम्मेदारियाँ डाल दी जाती हैं। लड़कियों को घर के पशुओं की देखभाल, उनके लिए चारे की व्यवस्था, उनकी साफ़-सफ़ाई एवं गोबर उठाने के साथ ईंधन के लिए लकड़ियों की व्यवस्था करना आदि कार्य करने पड़ते हैं। शेष बचे हुए समय में वे हस्तकला, सिलाई-बुनाई आदि कार्यों तक ही सीमित रह जाती हैं।

लड़कियों को स्कूल में भेजने के पीछे उनके अभिभावकों की गरीबी भी एक प्रमुख कारण है, जिससे वे उनकी शादी का भार उठाने के डर से कम उम्र में ही उनकी शादी कर देते हैं। यदि अपवाद स्वरूप लड़कियाँ पढ़ाई के प्रति आकर्षित होती भी हैं, तो उन्हें उनके अभिभावकों द्वारा लड़की होने का अहसास करा दिया जाता है। साथ ही यह बता दिया जाता है कि वह पुरुषों से कमज़ोर है और उनकी बराबरी करने का हर प्रयास बेकार है। शहरों की अपेक्षा गाँव के लोग लड़कियों की सुरक्षा के प्रति अधिक चिंतित होते हैं। इस कारण ये अभिभावक लड़कियों को बहुत ज़्यादा पढ़ाने-लिखाने में रुचि नहीं लेते हैं। लिहाजा गाँव की लड़कियाँ शिक्षा से वंचित रह जाती हैं। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने बालिका साक्षरता दर में कमी के सुधार का लक्ष्य निर्धारित किया है, जिससे ग्रामीण स्तर पर इस योजना का कार्यान्वयन ग्राम शिक्षा समिति के माध्यम से किया जा रहा है। ग्राम शिक्षा समिति द्वारा ग्रामीण स्तर पर स्थानीय समुदाय के सहयोग एवं भागीदारी के माध्यम से प्रारंभिक शिक्षा में बालक- बालिकाओं का नामांकन करके बालिका शिक्षा की शुरुआत की गई है, लेकिन यह देखना आवश्यक हो जाता है कि क्या इस साक्षरता अभियान के दौरान समुदाय या ग्राम शिक्षा समिति, बालिका शिक्षा के विकास में दरअसल अपने उत्तरदायित्व निभा रही हैं या कार्य कर पा रही हैं।

शोध की आवश्यकता

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण तथा बालिका शिक्षा की स्थिति सुधारने तथा विकास के लिए अनेक प्रयास किए गए। इन्हीं प्रयासों के अंतर्गत प्रदेश में बेसिक शिक्षा परियोजना, ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, जनशाला कार्यक्रम, सर्वशिक्षा अभियान कार्यक्रम, प्राथमिक शिक्षा में शत-प्रतिशत नामांकन, ठहराव, ड्रॉप आउट तथा उपलब्धि स्तर को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से प्रारंभ किया गया। इसके अंतर्गत विद्यालय सुविधाओं के साथ-साथ विद्यालय में विभिन्न भौतिक एवं वित्तीय संसाधन के अतिरिक्त शिक्षकों की नियुक्ति तथा उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की गई ताकि सभी बच्चों (6-14 वर्ष) को नामांकित कराकर गुणवत्ता के साथ नियमित शिक्षा प्रदान की जा सके। प्रारंभिक चरण में शिक्षा सुविधाओं और नामांकन में काफ़ी विस्तार हुआ है, लेकिन अभी भी हम अपने लक्ष्य से दूर हैं। विभिन्न परियोजनाओं के अंतर्गत प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए प्रत्येक गाँव में समुदाय की सहभागिता के लिए एक ग्राम शिक्षा समिति का गठन किया गया है, इन समितियों को विद्यालय के विकास के लिए अनेक प्रशासनिक, शैक्षिक तथा वित्तीय अधिकार दिए गए हैं, जिससे सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा मिल सके। लेकिन इस प्रयास के बावजूद भी हम प्रारंभिक शिक्षा का शत-प्रतिशत लक्ष्य अभी तक प्राप्त नहीं कर पाए हैं। इन प्रयासों में समुदाय की सहभागिता को जानना वर्तमान की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इसीलिए प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया है।

प्रयुक्त शब्दावली की व्याख्या

प्रयुक्त शब्दावली की व्याख्या निम्न प्रकार है-

1. **नामांकन से तात्पर्य है,** किसी विद्यालय में

निर्धारित आयु और कक्षावार कितने बच्चे विद्यालय के रजिस्टर में अंकित हैं।

2. **ठहराव से अभिप्राय है** कि विद्यालय में नामांकित बालक/बालिकाएँ वहाँ अपनी पढ़ाई जारी रखें और उस विद्यालय की उच्चतम कक्षा तक शिक्षा ग्रहण करें। उदाहरण- प्राथमिक विद्यालय में यदि 100 बालिकाएँ प्रथम कक्षा में प्रवेश लेती हैं और उनमें से 70 बालिकाएँ पाँचवी कक्षा उत्तीर्ण करती हैं, तो ठहराव की दर 70 प्रतिशत होगी और 30 प्रतिशत दर ड्रॉप आउट की हो जाएगी। 100 प्रतिशत ठहराव ही सर्वशिक्षा अभियान का लक्ष्य है।

उद्देश्य

- बालिकाओं की स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त करने तथा विद्यालय में बालिकाओं के नामांकन तथा ठहराव के बारे में जानकारी हासिल करना।
- समुदाय की सहभागिता एवं ग्राम शिक्षा समिति द्वारा बालिका शिक्षा के विकास के लिए किए गए प्रयासों को जानना।

अध्ययन की विधि

बालिका शिक्षा के विकास में समुदाय की सहभागिता के कार्य का ज़मीनी स्तर पर बारीकी से अध्ययन करने के लिए सर्वशिक्षा अभियान के द्वारा दिए गए अधिकार, कार्य एवं उत्तरदायित्व संबंधी समस्त दस्तावेज़ों का विश्लेषण किया गया। ज़िले ज्योतिबा फूले नगर में संचालित कुल 1400 प्राथमिक/उच्च प्राथमिक विद्यालय हैं, जिनमें कुल अध्यापक 2075 और 1782 शिक्षामित्र वर्तमान में कार्यरत हैं। इसी ज़िले के ब्लॉक हसनपुर में कुल 230 प्राथमिक/ उच्चप्राथमिक विद्यालय हैं, जिनमें 480 अध्यापक और 302 शिक्षामित्र कार्यरत हैं ब्लॉक गंगेश्वरी में कुल 216 प्राथमिक/ उच्च प्राथमिक विद्यालय हैं, जिनमें कुल अध्यापक 405 और 263 शिक्षामित्र कार्यरत हैं (स्रोत-डाइट कार्यालय, जे. पी. नगर, फरवरी 2009)। शोधकर्त्ता द्वारा इनमें से प्रत्येक ब्लॉक से 10 प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में जाकर अध्यापकों और बालिकाओं तथा अन्य कार्यकर्त्ताओं से विचारविमर्श के साथ-साथ विद्यालय के रजिस्टर का अवलोकन किया गया। अभिभावकों और ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों से विस्तृत बातचीत की गई और प्रपत्र भी भरवाया गया। इस प्रकार यह शोध पूरी तरह गुणात्मक विधि से किया गया।

न्यादर्श

इस अध्ययन में जनसंख्या से तात्पर्य यह है कि उत्तर प्रदेश में गंगा के मैदानी भाग जनपद ज्योतिबा फुले नगर के ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के प्राथमिक तथा उच्च प्राथामिक विद्यालयों में अध्ययनरत सभी बालिकाएँ और ग्राम शिक्षा समिति, समुदाय, अभिभावक, अध्यापक आदि आते है, किंतु इनमें से यादृच्छिक विधि से न्यादर्श के रूप में ज़िले के दो ब्लॉक चुने गए- हसनपुर ब्लॉक और गंगेश्वरी ब्लॉक जिनमें से प्रत्येक ब्लॉक से दो संकुल और प्रत्येक संकुल से पाँच विद्यालय और उनके गाँव की ग्राम शिक्षा समिति के सदस्य, अभिभावक, अध्यापक और बालिकाओं का चयन किया गया। केवल

उन्हीं छात्राओं को सम्मिलित किया गया, जिनकी आयु 14 वर्ष या उससे कम थी। इस प्रकार कुल 20 विद्यालयों का दौरा किया गया।

अध्ययन के उपकरण

इस शोधकार्य में उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शोधकर्त्ता द्वारा स्वनिर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है, जिनका विवरण निम्नानुसार है–

- बालिकाओं का विद्यालय में नामांकन एवं उपस्थिति स्तर जानने के लिए शिक्षक से जानकारी संकलन के लिए प्रपत्र का उपयोग किया गया।
- बालिकाओं के परिवार की सामाजिक, आर्थिक और व्यावसायिक स्थिति जानने के लिए अभिभावक साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण किया गया।
- ग्राम शिक्षा समिति के सदस्य एवं ग्राम प्रधान से बालिका शिक्षा में उनके उत्तरदायित्व, कार्य तथा उनके द्वारा किए गए प्रयास को जानने के लिए समुदाय की सहभागिता साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण किया गया।
- बालिकाओं के ठहराव एवं ड्रॉप आउट को जानने के लिए विद्यालय के रजिस्टर से जाति, परिवार की शिक्षा, परिवार के व्यवसाय आदि की जानकारी प्राप्त की गई।

बालिका शिक्षा और समुदाय की सहभागिता संबंधी शोध अध्ययन का संक्षिप्त विवरण

प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने के लिए सभी को समान अवसर प्रदान करने, संसाधनों और कार्यक्षेत्र को व्यापक बनाने, शैक्षिक परिवेश का विकास करने, सीखने पर बल देने, संसाधन जुटाने, सहयोग, सहकार्य/समन्वयन की नीति को विकसित करने तथा राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने हेतु राष्ट्रीय स्तर पर वांछित तथ्य की प्राप्ति हेतु एक कार्ययोजना तैयार की गई है। इस कार्ययोजना में बालिका शिक्षा और सुविधा से वंचित बच्चों की शिक्षा को प्राथमिकता, शिक्षा के स्तर में सुधार, समुदाय की सहभागिता तथा शैक्षिक संगठनों के सहयोग पर विशेष बल दिया गया तथा उत्तर प्रदेश सभी के लिए शिक्षा परियोजना परिषद्, राज्य परियोजना कार्यालय, लखनऊ द्वारा प्रदेश की सभी ग्राम पंचायतों में गठित ग्राम शिक्षा समिति हेतु निर्देशिका पुस्तक 'सहयोग' दी गई है, जिसमें ग्राम शिक्षा समिति का गठन, कार्य, उत्तरदायित्व तथा अधिकारों का विस्तृत वर्णन किया गया है। यथा बालिका शिक्षा के विकास एवं सहभागिता के उद्देश्य को ध्यान में रखकर प्रपत्र तथा प्रश्नावली से दौरे के दौरान आँकड़े एकत्र करके उनका विश्लेषण किया गया।

विद्यालय में किए गए दौरे का विवरण

बालिका शिक्षा ज्योतिबा फुले नगर ज़िले के अंतर्गत हसनपुर एवं गंगेश्वरी ब्लॉक में स्थित प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक विद्यालय में दौरे के दौरान पाया गया कि स्कूल में दो कमरे, बरामदा और एक हाल है। छात्र-छात्राओं के बैठने के लिए फ़र्श तथा दरी की सुविधा है। किसी भी विद्यालय में पुस्तकालय नहीं है और विद्यालय में बालक-बालिका शौचालय है, लेकिन उनकी स्थिति दयनीय है। जल की आपूर्ति के

लिए हैंड पंप की व्यवस्था है। इन विद्यालयों में एन.सी.ई.आर.टी. एवं उत्तर प्रदेश सरकार का पाठ्यक्रम भी है। ये पाठ्यक्रम लड़कियों में क्षमता निर्माण एवं आत्मविश्वास जैसे गुणों के विकास में महत्वपूर्ण हैं, लेकिन योग्य अध्यापकों के अभाव और उपस्थित अध्यापक तथा शिक्षा मित्रों की व्यस्तता और उदासीनता भी शिक्षा को अपने लक्ष्य तक पहुँचाने में बाधक है। अध्यापकों से बातचीत के द्वारा पता चला कि अधिकांश अध्यापकों ने बालिका शिक्षा के विकास, जैसे-नामांकन में वृद्धि, ड्रॉप आउट को कम करने तथा उनकी उपस्थिति बढ़ाने से संबंधित कोई विशेष प्रयास नहीं किया। अधिकांश नवनियुक्त अध्यापक ज़िले से बाहर के हैं, जो कि अधिकांशतः समय पर विद्यालय नहीं आते और विद्यालय का समय पूरा होने से पहले ही चले जाते हैं तथा कुछ अध्यापक तो एबीएसए तथा बीएसए को प्रतिदिन की उपस्थिति के लिए सुविधा शुल्क दे रहे हैं। यह जानकारी विद्यालय में उपस्थित अध्यापक, शिक्षामित्र तथा ग्राम शिक्षा समिति के लोगों से मिली। कुछ अध्यापक विद्यालय में बिना सूचना दिए अवकाश कर लेते हैं और कुछ अध्यापक अवकाश प्रार्थनापत्र पर बिना दिनांक और स्वीकृति के अवकाश कर लेते हैं और पत्र व्यवहार रजिस्टर पर भी कोई सूचना अंकित नहीं करते हैं। जब विद्यालय आते भी हैं, तो वे पिछले दिनों की उपस्थिति भी लगा देते हैं। विद्यालय दौरे के दौरान पाँच विद्यालयों में ऐसे अवकाश प्रार्थना पत्र मिले, जिन पर न तो दिनांक था, न प्रधानाचार्य की स्वीकृति और न ही वे प्रार्थनापत्र, पत्र व्यवहार रजिस्टर पर अंकित थे। इस प्रकार अध्यापक अपने अध्यापन कार्य से विमुख होकर केवल विद्यालय आने की औपचारिकता निभा रहे हैं। ग्राम शिक्षा समिति की सहभागिता के लिए विद्यालय स्तर पर प्रत्येक माह की 16 तारीख को बैठक निश्चित की गई है, लेकिन अधिकांश अध्यापकों का जवाब था कि बैठक में ग्राम शिक्षा समिति का कोई भी सदस्य नहीं आता। कई बार तो अध्यापक अपने रिकॉर्ड की पूर्ति के लिए ग्राम प्रधान के घर जाकर बैठक के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करा लाते हैं।

समुदाय के सदस्य एवं लड़कियों के अभिभावकों से बातचीत का ब्यौरा

गाँव के परिवार के वे सदस्य, जिनकी लड़कियाँ प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में पंजीकृत हैं, शैक्षिक व आर्थिक रूप से पिछड़े हुए हैं। ज़्यादातर लोग पिछड़ी जाति तथा अनुसूचित जाति के अंतर्गत आते हैं। ये लोग मुख्य रूप से कृषक, मज़दूर, दिहाड़ी मज़दूर और पशु-पालन जैसे पेशे से जुड़े हैं। इन सभी परिवारों की मासिक आय 1000 से 5000 के बीच है। प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक विद्यालय में पंजीकृत बालिकाओं के पारिवारिक सदस्यों से वार्तालाप करने से पता चला कि अधिकतर बालिकाएँ सिर्फ़ घर के कामकाज, कृषि एवं पशु धन देखती हैं। जिन लोगों से वार्तालाप किया गया, वे सभी 30 साल से 70 साल के महिला-पुरुष थे। यहाँ के अधिकांश गाँवों में कोई भी लड़की स्तानक पास नहीं है। जिन अभिभावकों से बातचीत की गई, उनमें से अधिकतर अभिभावक

अपनी लड़कियों को प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक विद्यालय में पढ़ाना चाहते हैं और वे अपनी लड़कियों को भी सामाजिक एवं आर्थिक रूप से समृद्ध और सशक्त बनाना चाहते हैं, लेकिन विद्यालय के शैक्षिक वातावरण तथा अध्यापकों की शिक्षण में उदासीनता के कारण अभिभावक भी हताश हैं।

ग्राम शिक्षा समिति एवं ग्राम प्रतिनिधि से बातचीत का ब्यौरा

ज्योतिबा फूले नगर ज़िले के हसनपुर और गंगेश्वरी ब्लॉक के अंतर्गत गाँवों के दौरे के क्रम में वहाँ की ग्राम शिक्षा समिति एवं ग्राम प्रधान से बालिका शिक्षा के संबंध में बातचीत की गई और उनसे निर्मित प्रपत्र भी भरवाया गया, जिससे पता चला कि बालिका शिक्षा के विकास के लिए ग्राम शिक्षा समिति ने कोई विशेष प्रयास नहीं किए। हमने बातचीत के माध्यम से सदस्यों से जब पूछा कि जिन लड़कियों ने स्कूल छोड़ दिया है, उनके विद्यालय में पुनः प्रवेश के लिए आपने कोई प्रयास किया है, तो अधिकांश का जवाब 'नहीं' था। लड़कियों के विद्यालय छोड़ने के क्या कारण हैं, पूछने पर अधिकांश का जवाब घर के कार्य में व्यस्त रहना, माता-पिता की अशिक्षा और गरीबी था।

पंचायत के सदस्यों ने यह स्वीकार किया कि जिन परिवारों की महिलाएँ थोड़ी भी साक्षर हैं। वे अपनी लड़कियों को पढ़ाने में रुचि रखती हैं तथा उन्हें नियमित रूप से विद्यालय भेजती हैं, लेकिन जिन बालक-बालिकाओं के माता-पिता बिल्कुल पढ़े-लिखे नहीं हैं वे अपने बच्चों की पढ़ाई में भी रुचि नहीं लेते हैं। और न ही ग्राम शिक्षा समिति ने उनकी पढ़ाई के लिए कोई विशेष प्रयास किया है। अधिकांश ग्राम शिक्षा समिति के प्रतिनिधि अपने गाँव के शैक्षिक विकास के उत्तरदायित्वों के प्रति उदासीन पाए गए। वे केवल विद्यालय के आर्थिक कार्य में सहभागी होते हैं।

निष्कर्ष

उपयुक्त परिणामों के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

- समुदाय और ग्राम शिक्षा समिति का बालिका शिक्षा के विकास में प्रयास सराहनीय नहीं है। बालिकाओं, विशेषतः ग्रामीण क्षेत्र में पिछड़ी जाति की बालिकाओं तथा अनुसूचित जाति की बालिकाओं की शिक्षा के विकास के लिए विशेष प्रयासों की आवश्यकता है।
- ग्राम शिक्षा समिति विद्यालयों के प्रशासनिक तथा वित्तीय कार्यों में ज़्यादा भाग लेती है। शैक्षिक दायित्व और कार्यों में कम रुचि लेती है, जिससे बालिका शिक्षा के विकास में समुदाय की सहभागिता अच्छी स्थिति में नहीं है।
- बालिकाओं की पारिवारिक, सामाजिक तथा व्यावसायिक स्थिति का भी बालिका शिक्षा पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।
- सर्वशिक्षा अभियान के दौरान बालिकाओं को दी जाने वाली उपलब्ध सुविधाओं और विद्यालय में नियुक्त एक महिला अध्यापक के कारण बालिकाओं के विद्यालय में नामांकन में काफ़ी वृद्धि हुई है, लेकिन विद्यालय में उनकी उपस्थिति बालकों से अभी भी कम ही रहती है।

- बालिकाओं की शिक्षा के प्रति शिक्षित अभिभावकों में जागरूकता आई है, लेकिन अशिक्षित अभिभावक आज भी बालिकाओं को गृहकार्यों में हाथ बँटाने के लिए घर पर ही रोक लेते हैं। अभी भी बालिकाओं को शिक्षा की मुख्य धारा में जोड़ने के प्रयास ज़रूरी हैं।

सुझाव

अध्ययन से प्राप्त परिणामों के आधार पर समुदाय/ग्राम शिक्षा समिति के कार्य और प्रयास तथा बालिका शिक्षा के विकास के संदर्भ में निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं–

- समुदाय के सदस्य/ग्राम शिक्षा समिति और अभिभावक मिलकर ऐसा वातावरण बनाएँ, जिससे बालिकाएँ स्वतंत्रतापूर्वक अपनी क्षमताओं के अनुसार योग्यता प्राप्त कर सकें, जो उनके चहुँमुखी विकास में सहायक होगा और उनमें आत्मविश्वास भी बढ़ेगा।
- समुदाय को प्रयत्न करना चाहिए कि बालक-बालिका में भेद न करके दोनों के विकास में समान शैक्षिक अवसर और समय प्राप्त हो।
- समुदाय और समिति के लिए यह आवश्यक है कि वे बालक-बालिकाओं की विद्यालयी गतिविधियों की जानकारी रखें और विद्यालयों में आयोजित पाठ्येतर क्रियाकलापों में बालक और बालिकाओं को समानता से सक्रिय रूप में भाग लेने को प्रोत्साहित करें।
- समुदाय और समिति के द्वारा अपने स्तर पर गाँव के अशिक्षित माता-पिता को प्रौढ़ शिक्षा और अन्य माध्यम से शिक्षित करके उनमें सकारात्मक प्रवृत्ति विकसित की जाए, जिससे वे अपनी बच्चियों को विपरीत परिस्थितियों में भी शिक्षा दिला सकें और उन्हें विद्यालय भेज सकें।
- समुदाय को बालिका शिक्षा की जागृति के लिए जनजागृति अभियान चलाना चाहिए और स्थानीय प्रशासन और राज्य सरकार द्वारा रिक्त पदों पर योग्य, प्रशिक्षित अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की नियुक्ति की जानी चाहिए तथा नियुक्ति में स्थानीय अध्यापकों को वरीयता दी जानी चाहिए।

''समुदाय के लिए यह समझना बहुत ही आवश्यक है कि यदि हम लड़कियों को पढ़ाएँगे तो वे अपनी ज़िम्मेदारी बेहतर ढंग से निभाएँगी और आत्मनिर्भर बनकर अपनी स्थिति सँवार पाएँगी तथा परिवार की देखभाल भी बेहतर ढंग से कर सकेंगी और समाज के विकास में बेहतर भूमिका निभाएँगी।''

संदर्भ सूची -

- चौधरी, सुजीत कुमार (2005), *रोल ऑफ लैंग्वेज इन एजुकेशन एंड फॉरमेशन ऑफ सोशल स्टेटस,* जर्नल ऑफ इंडियन एजुकेशन, नवंबर, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

- दशोरा, राकेश एंड अनुश्री शर्मा (2003), *रोल ऑफ ट्राइबल वीमन इन एजुकेशन*, योजना पब्लिकेशन डिवीजन, जून

- एन.सी.ई.आर.टी., (1996) *बालिका शिक्षा एवं महिला सशक्तीकरण दशा* एवं दिशा, हरियाणा, गुडगाँव

- *योजना मासिक पत्रिका*, सितंबर 2005, नयी दिल्ली

- गेरे.एम.एस. एंड ऐट.एल. (1970), *फील्ड स्टडीज इन द सोशियोलॉजी ऑफ एजुकेशन ऑल इंडिया रिपोर्ट,* एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

- शिव दत्त त्रिवेदी *सामुदायिक शिक्षा एवं सहभागिता के संबंध मे विकासात्मक क्रियाकलाप* राज्य शिक्षा संस्थान, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद

- महिला समाख्या, वार्षिक रिपोर्ट 2005-06, उत्तर प्रदेश

- *स्त्री-पुरुष समानता*, अक्तूबर 2006, योजना मासिक पत्रिका, योजना भवन, संसद मार्ग, नयी दिल्ली

- भारत सरकार (2000), *सबके लिए शिक्षा,* मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नयी दिल्ली।

- *शिक्षा की प्रगति* (2001-2004) शिक्षा निदेशालय, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद।

- *बेसिक शिक्षा के महत्वपूर्ण आँकड़े* (1998), बेसिक शिक्षा निदेशालय, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद।

❑❑❑

12

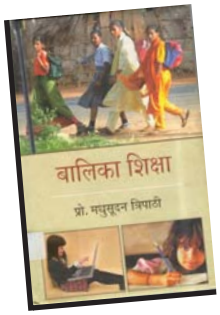

पुस्तक का नाम	बालिका शिक्षा
लेखक	प्रो. मधुसूदन त्रिपाठी
मूल्य	दो सौ पचास रूपए
संस्करण	प्रथम, 2008
प्रकाशक	विद्यावती प्रकाशन बी-216, चंदू नगर, करवलनगर रोड दिल्ली-110094

शबनम सैयदा*

कहा जाता है कि एक बालिका को शिक्षित करने से पूरे परिवार को शिक्षित किया जा सकता है। बालिका शिक्षा के महत्त्व से कोई भी इंकार नहीं कर सकता है। महिलाओं में व्याप्त अशिक्षा के कारण ही आम महिलाओं के लिए विकास आज भी दूर की कौड़ी है। महिलाओं की इस बदहाल स्थिति का बस एक ही कारण है- शिक्षा की कमी, जागरूकता की कमी। आज समूचे देश में बालिकाओं के लिए मुफ़्त शिक्षा का प्रावधान है, लेकिन फिर भी बहुत-सी बालिकाएँ, स्कूल के दरवाज़े तक नहीं पहुँच पाती हैं। विकास कार्यों और देश की उत्पादकता में औरतों का प्रतिनिधित्व ज़रूरी है। बालिका शिक्षा के महत्त्व और इन अवरोधकों की पहचान हेतु 'बालिका शिक्षा' पुस्तक का प्रणयन किया गया है। इस पुस्तक में बालिका शिक्षा से संबंधित सभी पक्षों का पूरी ईमानदारी से विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। विषय को पूरी सम्यकता से समझने के लिए पुस्तक को कुल 10 अध्यायों में विभाजित किया गया है।

इस पुस्तक के लेखक मधुसूदन जी ने प्रथम अध्याय ''बालिका शिक्षा का महत्त्व'' में बालिकाओं के लिए शिक्षा के महत्त्व को बड़ी कुशलता के साथ पाठकों एवं अभिभावकों को समझाने का प्रयास किया है। शिक्षा प्रकाश का वह स्रोत है, जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सच्चा पथ प्रदर्शन करती है। विद्वानों का मत है कि ज्ञान मनुष्य की तीसरी आँख है और यह तीसरी आँख समस्त तत्त्वों के मूल को समझने की क्षमता प्रदान करती है। शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, सामाजिक और राष्ट्रीय प्रगति तथा सभ्यता एवं संस्कृति के लिए अत्यंत आवश्यक है। आज के आधुनिक युग में महिला

* कनिष्ठ परियोजना अध्येता, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

शिक्षा का अत्यधिक महत्त्व है, फिर भी हमारे देश में महिला शिक्षा की स्थिति बेहद खराब है। भारतीय महिलाओं के बीच शिक्षा का बेहद अभाव है, जिस कारण वे लगातार हर क्षेत्र में पिछड़ती जा रही हैं। शिक्षा के बिना न तो महिला जागरूक हो सकती है और न ही सशक्त। किसी भी देश का वास्तव में विकास तभी संभव है, जब वहाँ की संपूर्ण आबादी का उसमें योगदान हो। पुस्तक के प्रथम अध्याय में इस प्रश्न को उठाया गया है कि भारत में जब 'आधी आबादी' के हिस्से की शिक्षा ही पूरी नहीं है, तो फिर किस प्रकार वह देश की उन्नति में हाथ बँटा सकती है? इस अध्याय में महिला शिक्षा को दो भागों- एक प्रारंभिक साक्षरता और दूसरा कार्यात्मक साक्षरता में बाँटा गया है। प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम में अधिक-से-अधिक ग्रामीण महिलाओं को जोड़ा जाना चाहिए, ताकि महिलाएँ अपने पैरों पर खड़ी हो सकें। इन बातों पर भी टिप्पणी की गई है कि दहेज, बालविवाह, वेश्यावृत्ति जैसे अपराध का मुख्य कारण शिक्षा की कमी है, जिसकी वजह से महिलाओं को विभिन्न प्रकार के अपराधों का शिकार होना पड़ता है। बालिका शिक्षा का सबसे बड़ा लाभ यह है कि बालिकाएँ शिक्षित होंगी तो वे अपने स्वास्थ्य का बेहतर तरीके से ध्यान रख सकेंगी। जब महिला स्वस्थ होगी तो पूरा परिवार विशेषकर बच्चे भी स्वस्थ होंगे। स्वस्थ परिवार ही विकास के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है। इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि बालिका शिक्षा पर अधिक से अधिक ध्यान दिया जाए।

पुस्तक के द्वितीय अध्याय ''आज़ादी से पूर्व बालिका शिक्षा'' में आज़ादी से पूर्व बालिकाओं की शैक्षिक स्थिति का सूक्ष्म अध्ययन किया गया है और पूर्व आर्यन युग, हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में प्रमाणों, वैदिक युग, बौद्धकाल, मुस्लिम काल, उन्नीसवीं सदी के चारों चरणों और हार्टिंग कमिटी के दौरान बालिकाओं के शैक्षिक हालात की विस्तृत विवेचना भी की गई है। प्राचीनकाल में बालिका शिक्षा पर अत्यधिक ध्यान दिया जाता था। पूर्व आर्यन युग में महिलाएँ समाज में अपना विशिष्ट स्थान रखती थीं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के मूल प्रमाण भी इस बात को उजागर करते हैं कि आर्यों के पूर्व के सिंधु समाज में महिलाएँ विशेष सम्मान प्राप्त करती थीं। शिक्षा के बिना ऐसे सम्मान की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। सिंधु सभ्यता में स्त्री रूपों को ही अधिक पूजा जाता था और राज्य तथा संपत्ति का उत्तराधिकार कन्याओं को मिलता था। वैदिक युग में महिलाओं का एक ऐसा वर्ग था, जो जीवन भर पठनपाठन में लगा रहता था। इन्हें ब्रह्मवादिनी कहा जाता था। रुप्पला, विश्ववरा गार्गी तथा अत्रेयी आदि इस समय की विदुषी दार्शनिक महिलाएँ थीं। वैदिक युग में अविवाहित कन्याओं को भी पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त थी। सभी तथ्यों से स्पष्ट होता है कि वैदिककाल में महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति अत्यधिक मज़बूत थी और उन्हें बिना भेदभाव के शिक्षा का अवसर प्राप्त था, परंतु वैदिक युग के बाद के कालखंड को क्रांति युग की संज्ञा दी जाती है। इसी दौरान समाज में महिलाओं की स्थिति का चरण आरंभ हुआ।

महिलाओं और जैन धर्मों में स्त्रियों को भिक्षुणी और साध्वी बनने का तो अधिकार था, लेकिन इनकी स्थिति भिक्षु और साधकों से निम्न ही समझी जाती थी। बौद्ध एवं जैन धर्मों की तुलना में हिंदू धर्म में उनकी सामाजिक स्थिति निरंतर तेज़ी से गिरती चली गई और इस धर्म में महिलाओं को दोयम दर्ज़े का नागरिक माना जाता था। मुस्लिम शासनकाल के दौरान शिक्षा के क्षेत्र में बेहद मामूली से प्रयास किए गए थे और ये प्रयास भी मात्र लड़कों तक ही सीमित थे। स्त्री शिक्षा की जो व्यवस्था थी, वह केवल शाही घरानों और कुलीन वर्गों की मुस्लिम बालिकाओं तक ही सीमित थी। उन्नीसवीं सदी के आरंभ में देश पर अँग्रेज़ों का राज स्थापित था। इस समय बालिका शिक्षा का प्रचलन तो था, परंतु स्कूल में लड़कों का प्रतिशत लड़कियों की तुलना में अधिक था। इस अध्याय में आधुनिक शिक्षा के काल को कुल चार चरणों में विभाजित कर बालिका शिक्षा की स्थिति का वर्णन बड़े ही अच्छे ढ़ंग से किया गया है। आधुनिक शिक्षा का प्रथम काल सन् 1700 से लेकर 1813 ई. तक माना जाता है। सर्वप्रथम सन् 1715 में मद्रास में पादरी स्टेमेंसन ने सेंट मेरी चैरिटी स्कूल की स्थापना की। इसके अलावा भी कई चैरिटी स्कूल खोले गए। इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में अँग्रेज़ों द्वारा प्रयास किए गए थे, लेकिन शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार नहीं हो पाया था। शिक्षा केवल उच्च वर्गों तक ही सीमित थी। आधुनिक शिक्षा का द्वितीय चरण सन् 1813 से 1854 ई. के बीच माना जाता है। इस चरण के दौरान मैकॉले ने बालिका शिक्षा के लिए कुछ प्रयास भी किए। विलियम बैंटिक ने सती प्रथा के उन्मूलन के द्वारा सामाजिक सुधार की दिशा में एक कठोर कदम उठाया था। लॉर्ड डलहौजी का विचार था कि भारतीय कन्याओं में शिक्षा के प्रसार से बढ़कर अन्य कोई सुधार भारतवासियों के लिए अधिक हितकर नहीं सिद्ध होगा। अत: इस दौरान शिक्षा संबंधी प्रयास केवल लड़कों की शिक्षा तक ही सीमित नहीं थे, अपितु लड़कियों की शिक्षा पर भी ध्यान दिया गया। आधुनिक शिक्षा के तृतीय चरण में बालिका शिक्षा के लिए विशेष प्रयास किए गए। सन् 1882 ई. के भारतीय शिक्षा आयोग ने स्त्री शिक्षा की समस्या पर पूरा गौर किया और इसके संबंध में कई सिफ़ारिशें भी की। 1882 के बाद भारत में स्त्री शिक्षा की कुछ प्रगति अवश्य हुई। 1902 में आधुनिक शिक्षा का चतुर्थ दौर आरंभ हुआ। इस दौरान बालिका शिक्षा की दिशा में काफ़ी प्रयास किए गए। 1904 लॉर्ड कर्जन ने बालिका शिक्षा के संबंध में कुछ सुझाव भी प्रस्तुत किए। इन प्रयासों और सुझावों का परिणाम यह हुआ कि संख्या वृद्धि के साथ-साथ कॉलेज की छात्राओं का विद्यालय जीवन भी पहले की अपेक्षा अधिक सार्थक होने लगा। 1902 में तो मुसलमान लड़कियाँ भी कॉलेज में पढ़ने लगीं। द्वितीय अध्याय में हार्टिंग कमेटी की भी विस्तारपूर्वक विवेचना की गई है। सन् 1927 ई. में हार्टिंग कमेटी ने स्त्री शिक्षा के प्रसार के लिए सुझाव दिए कि कन्या स्कूलों के निरीक्षकों की संख्या में वृद्धि की जाए, लड़कियों के लिए अनिवार्य शिक्षा की प्रगति धीरे-धीरे होनी चाहिए, लड़कियों के लिए

अतिरिक्त विषय रखे जाएँ आदि। सन् 1937–1947 की अवधि में भारतीय स्त्रियों ने शिक्षा के सभी क्षेत्रों में प्रगति की और यह प्रगति उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सबसे अधिक रही। सन् 1947 ई. में अनेक भारतीय स्त्रियाँ सरकारी तथा गैर सरकारी पदों पर प्रतिष्ठित थीं। इसके साथ-साथ विश्वविद्यालयों को छोड़कर भारत में कुल मिलाकर स्त्री शिक्षा की 16,948 संस्थाएँ (स्कूल-कॉलेज) थीं। इस तरह स्त्री शिक्षा की दिशा में यह काल स्वर्णकाल के रूप में रहा।

पुस्तक के तृतीय अध्याय में आज़ादी प्राप्ति के बाद बालिका शिक्षा की स्थिति को उजागर करने का प्रयास किया गया है। 15 अगस्त 1947 को भारतीय इतिहास में एक नए तथा गौरवपूर्ण युग का समारंभ हुआ। स्वतंत्रता के बाद भारत पर कई मुसीबतें एक साथ टूट पड़ीं। विभाजन के कारण एक ओर तो पूरा देश सांप्रदायिक हिंसा की आग में झुलस रहा था, तो दूसरी ओर विभाजन के कारण लाखों लोगों को विभाजित होना पड़ा। इसी के कुछ समय बाद द्वितीय विश्व युद्ध शुरू हो गया। ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में सरकार, शिक्षा अथवा अन्य रचनात्मक कार्यों की ओर न तो पर्याप्त ध्यान दे सकती थी और न ही वह इस मद में पैसा खर्च कर सकती थी। यही कारण है कि स्वतंत्रता के बाद प्रथम चरण में भारतीय शिक्षा के क्षेत्र में वह प्रगति नहीं हो सकी जो कि अनुकूल परिस्थितियों में हो सकती थी। इन सबके बावजूद सरकार, शिक्षा के प्रति पूरी तरह से विमुख नहीं रह सकती थी। विभिन्न कठिनाईयों के समक्ष भी वह शिक्षा के पुनर्निर्माण तथा प्रगति की ओर प्रयासरत रही। सन् 1953-54 में सारे देश में कुल मिलाकर 3,21,405 शिक्षण संस्थाएँ क्रियाशील थीं, जिनमें लगभग 296 लाख छात्र शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। इसी दौरान प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, विश्वविद्यालय शिक्षा, सामाजिक शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा आदि पर ज़ोर दिया गया।

पुस्तक के चतुर्थ अध्याय में शिक्षा के मौलिक अधिकारों, नीति निर्देशक तत्त्वों के महत्त्व को समाहित किया गया है। हमारे संविधान निर्माता बालिका शिक्षा के महत्त्व से भली-भाँति परिचित थे। इसलिए उन्होंने संविधान में कई ऐसे प्रावधान किए जिनकी सहायता से भारतीय महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति को सुधारा जा सकता है। भारत के संविधान में स्त्रियों के साथ किसी तरह का कोई भेदभाव न करते हुए उन्हें पुरुषों के समान ही बराबर के अधिकार दिए गए हैं, ताकि वे शिक्षा प्राप्त कर विकास की दौड़ में भागीदार बन सकें। एक संशोधन के द्वारा प्राथमिक शिक्षा को भी मौलिक अधिकारों में सम्मिलित कर लिया गया है। बालिका शिक्षा की दिशा में यह मील का पत्थर साबित होगा, क्योंकि शिक्षा प्राप्त करना अब प्रत्येक बालिका का मौलिक अधिकार बन गया है। भारतीय संविधान में नीति निर्देशक तत्त्वों का विशद् वर्णन किया गया है। संविधान के चतुर्थ भाग में अनुच्छेद 35 से लेकर 51 तक में राज्य के उन नीति निर्देशक सिद्धांतों से संबंधित उपबंध है। भारत के संविधान में कई ऐसे नीति निर्देशक तत्त्व दिए गए हैं, जो सीधे-सीधे महिलाओं के कल्याण और बालिका शिक्षा से संबंधित हैं।

बस ज़रूरत इस बात की है कि इन प्रावधानों को सख्ती से लागू किया जाए।

पुस्तक के पाँचवें अध्याय में बालिका शिक्षा की उन्नति हेतु बनाई गई विभिन्न समितियों का वर्णन है, सरकार और विभिन्न एजेंसियों द्वारा बालिकाओं के बीच शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने के लिए लंबे समय से काफ़ी प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन उसके अपेक्षित परिणाम नहीं मिल पा रहे हैं। इस समस्या के समाधान हेतु विभिन्न समितियों और आयोगों का गठन समय-समय पर किया गया है, ताकि उन कारणों का पता लगाया जा सके, जिनके कारण महिला साक्षरता का प्रतिशत बढ़ नहीं पा रहा है। बालिका शिक्षा की दिशा में आ रही दिक्कतों को समझने और रुकावटों को दूर करने के लिए सर्वप्रथम सन् 1948 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने बालिका शिक्षा के संबंध में महत्वपूर्ण सिफारिशें कीं। इसके बाद 1952 में माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने बालिकाओं की माध्यमिक शिक्षा के संदर्भ में गंभीर विचार किया और फिर सिफ़ारिशों से संबंधित रिपोर्ट सरकार को सौंपी। इसके अलावा भी कुछ प्रमुख समितियाँ और आयोग जैसे- दुर्गाबाई देशमुख समिति, श्रीमती हंसा मेहता समिति, भक्तवत्सलम् समिति, स्त्री शिक्षा आयोग, स्त्री शिक्षा समीक्षा समिति, कामकाजी महिलाओं से संबंधित राष्ट्रीय आयोग आदि का गठन किया गया। हंसा मेहता समिति का गठन 1962 में हुआ। इस समिति का मानना था। कि बालिकाओं के लिए इस तरह की शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए कि वे घर और व्यवस्था दोनों को संभाल सकें। इस प्रकार सरकार के इन प्रयासों के अच्छे परिणाम देखने को मिले हैं और अब बालिकाओं के बीच शिक्षा का प्रचार-प्रसार अपेक्षाकृत काफ़ी बढ़ गया है, लेकिन यह संतुष्ट होकर हाथ पर हाथ धरकर बैठ जाने का समय नहीं है। पूर्ण साक्षरता का लक्ष्य अभी काफ़ी दूर है। यह केवल सरकार की ही ज़िम्मेदारी नहीं है। इस राष्ट्रीय आंदोलन में हम सभी को अपने हिस्से की ज़िम्मेदारियों का निर्वहन करना चाहिए।

पुस्तक के छठे अध्याय ''शिक्षा नीति में बालिका शिक्षा'' में बुनियादी शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु बनाई गई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की विस्तृत विवेचना की गई है। आज़ाद भारत की सरकार ने सर्वशिक्षा के लिए काफ़ी प्रयास किए, लेकिन हमें सफलता नहीं मिल सकी, क्योंकि तत्कालीन आर्थिक और राजनैतिक परिस्थितियाँ बेहद प्रतिकूल थीं। वस्तुतः जैसे-जैसे समय गुज़रता गया सार्वभौमिक बुनियादी शिक्षा का लक्ष्य हमसे और दूर होता गया। सार्वभौमिक बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में सबसे अधिक प्रयास नब्बे के दशक में किए गए थे। इन्हीं की बदौलत साक्षरता की दर कुछ बढ़ी। सार्वभौम बुनियादी शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भारत सरकार द्वारा सन् 1986 ई. में राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की गई। इस नीति में कहा गया कि महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए शिक्षा का एक साधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। महिला सशक्तीकरण आज वक्त की ज़रूरत है। इस उद्देश्य को मात्र

बालिका शिक्षा के सहारे ही प्राप्त किया जा सकता है। शिक्षा नीति में बालिकाओं के साथ होने वाले भेदभाव को भी समाप्त करने की बात कही गई। इस नीति के अंतर्गत अनौपचारिक शिक्षा को भी काफ़ी महत्त्व दिया गया था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा के लिए सन् 1990 में एक समीक्षा समिति का गठन किया गया। इसको 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा करनी थी। राममूर्ति समिति का यह मत था कि महिलाओं को अधिकार दिए बगैर देश का संपूर्ण विकास नहीं हो सकता। इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि महिलाओं को हर स्तर पर अधिकार दिए जाएँ। संशोधित शिक्षा नीति में सर्वाधिक ज़ोर अनौपचारिक शिक्षा पर दिया गया था और विकास के कार्यक्रमों में आम जनता की भागीदारी बढ़ाने पर भी ज़ोर दिया गया था। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि आवश्यक संशोधन के बाद राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक संपूर्ण नीति बन गई थी। ज़रूरत केवल इस बात की थी कि इन प्रावधानों को गंभीरता से लागू करने दो।

बालिकाओं की शिक्षा से संबंधित आँकडों का गहन विश्लेषण इस पुस्तक के सातवें अध्याय में मिलता है। दुनिया के सबसे अधिक बच्चे हमारे देश में बसते हैं, परंतु सबसे ज़्यादा निरक्षर और कुपोषित बच्चे भी भारत में ही हैं। हमारे देश में लगभग 40 करोड़ बच्चे बसते हैं। बच्चों की कुल आबादी में बालकों की संख्या अधिक और बालिकाओं की कम है। इससे स्पष्ट होता है कि लैंगिक भेदभाव किया जाता है और यह लैंगिक भेदभाव बालिकाओं के साथ चाहे वह शिक्षा हो या अन्य सुविधाएँ हर स्तर पर किया जाता है। पुस्तक के अंतर्गत आँकड़े इस बात को दर्शाते हैं कि लड़कियों की साक्षरता दर और मृत्यु दर लड़कों की तुलना में उच्च है। सन् 1999-2000 की स्थिति के मुताबिक स्कूल जाने वाल लड़कों का प्रतिशत अधिक था, जबकि लड़कियों का प्रतिशत कम। इसी प्रकार 2001 में की गई जनगणना से पता चलता है कि जहाँ पुरुष साक्षरता दर 76 प्रतिशत थी, वहीं स्त्री साक्षरता दर मात्र 54 फीसदी ही थी। उपरोक्त आँकड़ों से पता चलता है कि भारतवर्ष में बालिका शिक्षा की स्थिति आज भी काफ़ी खराब है। हालाँकि आज़ादी के बाद से इसमें कुछ सुधार हुआ है, लेकिन सुधार की रफ़्तार काफी धीमी है। इस दिशा में अभी काफ़ी कुछ किया जाना शेष है।

आठवें अध्याय ''कैसे बढ़े बालिका शिक्षा'' में बालिका शिक्षा और राष्ट्र के मध्य संबंध स्थापित किया है। इसके साथ-साथ उन सवालों को भी उठाया गया है कि बालिकाओं की शैक्षिक दर को किस प्रकार बढ़ाया जाए? इसके अतिरिक्त बालिका शिक्षा की राह में आने वाली रुकावटों और दूर करने के उपाय भी इस अध्याय में सुझाए गए हैं। बालिकाओं की शिक्षा की राह में सबसे बड़ी रुकावट जागरूकता की कमी है। अभिभावकों की संकुचित मानसिकता को बदलना होगा और उन्हें यह समझाया जाना चाहिए कि शिक्षित बालिका ही एक अच्छी माँ, एक अच्छी पत्नी, एक अच्छी बहू और एक अच्छी नागरिक बनकर देश को

विकास के मार्ग पर अग्रसर कर सकती है। बालिकाओं की शिक्षा में सुधार हेतु केंद्र और राज्य सरकारों के अलावा अनेक सरकारी एजेंसियाँ प्रयास कर रही हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बालिका शिक्षा की तस्वीर कैसे बदली जाए, इस संदर्भ में सन् 1995 में चीन के बीजिंग शहर में हुए चौथे विश्व महिला सम्मेलन में विस्तार से चर्चा की गई। इसी तरह बालिका शिक्षा से संबंधित एक महत्वपूर्ण शिखर सम्मेलन सन् 1993 में दिल्ली में आयोजित किया गया था। बालिका शिक्षा आज वक्त की ज़रूरत है। केवल सरकारी प्रयास से ही तस्वीर कुछ खास बदलने वाली नहीं है। इस काम में हम सभी को आगे आना होगा और अपने-अपने हिस्से की ज़िम्मेदारियों का निर्वहन करना होगा।

पुस्तक के नौवें अध्याय ''आदर्श बालिका विद्यालय'' के अंतर्गत सहशिक्षा के समर्थन में एवं सहशिक्षा के विरोधी विचारों को व्यक्त किया है और इन प्रश्नों को भी उठाया है कि एक आदर्श बालिका विद्यालय कहते किसे हैं? वैसे बालिकाओं की शिक्षा के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता है। भारत में परंपरागत समाज होने के कारण अधिकांश लोग सहशिक्षा वाले स्कूलों में लड़कियों को भेजने से कतराते हैं। वहीं कुछ लोगों का विचार सहशिक्षा के पक्ष में हैं। ऐसे लोगों का सोचना है कि जब लड़के-लड़कियाँ एक-दूसरे के साथ पढ़ते-लिखते हैं तो एक-दूसरे से बहुत कुछ सीखते हैं और एक-दूसरे के विचारों को भी समझते हैं। इन बच्चों में आत्मविश्वास की बढ़ोतरी भी होती है। कुल मिलाकर हम यह कह सकते हैं कि स्कूल का वातावरण ऐसा होना चाहिए कि उसमें बालिकाएँ अपने-आपको पूरी तरह से सुरक्षित समझें।

पुस्तक के अंतिम अध्याय ''बालिका शिक्षा हेतु सरकारी कार्यक्रम'' में सरकार द्वारा चलाए जा रहे कार्यक्रमों व परियोजनाओं का ज़िक्र किया गया है। सबसे पहली बात राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की है। यह महत्त्वाकांक्षी परियोजना भारत सरकार द्वारा 1988 में आरंभ की गई थी। इस मिशन का मुख्य उद्देश्य सभी को बुनियादी शिक्षा प्रदान करना था। उड़ीसा के कई क्षेत्रों में महिला साक्षरता कार्यक्रम चलाए गए। झारखंड में भी विशेष महिला साक्षरता कार्यक्रम चलाए गए। सतत् शिक्षा, मानव संसाधन विकास कार्ययोजना और शिक्षार्थी समाज के सृजन के लक्ष्य के लिए एक अनिवार्य पहलू है। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने सतत् शिक्षा को अपने क्रियाकलापों का एक आवश्यक घटक बनाया है। इसके अलावा पिछड़ी जाति की लड़कियों के लिए भी शैक्षिक कार्यक्रम चलाए गए। इसके अलावा दोपहर भोजन योजना, सर्वशिक्षा अभियान, ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, ब्लैकबोर्ड अभियान, लोकजुंबिश परियोजना, शिक्षाकर्मी परियोजना, महिला समाख्या, जनशाला कार्यक्रम, अध्यापक शिक्षा, राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्, जनसंख्या शिक्षा परियोजना, स्कूल में विज्ञान की शिक्षा में सुधार, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, राष्ट्रीय प्रतिभा खोज योजना आदि अन्य कार्यक्रम चलाए गए।

इस पुस्तक में बालिका शिक्षा का महत्त्व अध्याय से लेकर बालिका शिक्षा हेतु सरकारी कार्यक्रम अध्याय तक के विवरण को परत दर परत इस तरह से उजागर किया गया है कि आम पाठकों के लिए भी पुस्तक उपयोगी

सिद्ध हो सके। पुस्तक की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि विषय बेहद विस्तृत और कठिन होते हुए भी सरल एवं बोधगम्य है। पुस्तक में बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है।

❑❑❑

प्राथमिक शिक्षक पत्रिका के बारे में

साथियो,

प्राथमिक शिक्षक पत्रिका में प्रारंभिक शिक्षा से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर आधारित ऐसे लेख प्रकाशित किए जाते हैं जो एक शिक्षक के लिए उपयोगी हों। इस पत्रिका के कुछ महत्वपूर्ण सरोकार हैं–

- शिक्षा संबंधी महत्वपूर्ण दस्तावेज़ों की जानकारी एवं विवेचन
- समसामयिक शैक्षिक शोध एवं अध्ययनों का विवरण
- समसामयिक शैक्षिक चिंतन
- शिक्षकों एवं शिक्षाविदों के अनुभव
- शिक्षकों एवं अभिभावकों के लिए व्यावहारिक बाल मनोविज्ञान
- शालाओं एवं शिक्षा केंद्रों की समीक्षा
- शिक्षा संबंधी खेल एवं उनकी उपयोगिता
- विभिन्न शिक्षण विधियाँ
- क्रियात्मक शोध और नवाचार
- शिक्षकों के लिए पठनीय पुस्तक के बारे में जानकारी आदि।

कैसे भेजें रचनाएँ

उपरोक्त सरोकारों पर आधारित लेख, संस्मरण, कविताएँ आदि आमंत्रित हैं। कृपया ध्यान रखें कि लेख सरल भाषा में तथा रोचक हों। शोधपरक लेखों के साथ संदर्भ साहित्य की सूची अवश्य दें। लेखों के प्रकाशन के उपरांत समुचित मानदेय की व्यवस्था है। लेखों की त्रुटिरहित टंकित प्रति अगर सी.डी. में भेज सकें तो अच्छा रहेगा। लेख ई–मेल द्वारा भी भेजे जा सकते हैं। अपने लेख निम्न पते पर भेजें –

अकादमिक संपादक

प्राथमिक शिक्षक

प्रारंभिक शिक्षा विभाग

एन.सी.ई.आर.टी.

श्री अरविंद मार्ग

नयी दिल्ली 110016

ई. मेल– deencert @ yahoo.co.in

कैसे बनें सदस्य

इस पत्रिका के सुचारु रूप से प्रकाशन, प्रचार एवं प्रसार के लिए पाठकों तथा लेखकों का सहयोग अनिवार्य है। इस संदर्भ में आपसे निवेदन है कि इस पत्रिका के स्थायी सदस्य के रूप में अपने विद्यालय, संस्थान अथवा स्वयं को पंजीकृत करवाने का कष्ट करें। इसका वार्षिक चंदा केवल 260 रु. है और प्रति कॉपी का मूल्य मात्र 65 रु. है। आशा है आप इस दिशा में शीघ्र ही निर्णय करके विद्यालय, संस्थान अथवा निजी वार्षिक सदस्यता के लिए कार्यवाही करेंगे। वार्षिक सदस्यता शुल्क–पत्र के लिए अपना पत्र स्वनामांकित लिफाफे सहित **बिज़नेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग (एन.सी.ई.आर.टी.) श्री अरविन्द मार्ग, नयी दिल्ली–16** को भेज सकते हैं।

बालमन कुछ कहता है

मुझे स्कूल जाना पसंद है
मेरा नाम अरून पहाड़िया है। मैं IVth कक्षा
में पढ़ता हूँ। मुझे रोज़-रोज़ स्कूल जाना
और पढ़ना अच्छा लगता है। मुझे
सभी विषयों में गणित पढना बहुता
बहुत अच्छा लगता है। क्योंकि इसमें
जोड़ना, घटाना, गुणा करना होता है।
जो मुझे अच्छा लगता है। मेरी मैडम
गणित में गोल, चौकोर, त्रिभुज और
स्केल से काम करना पसंद है। मेरी मैडम
गणित को भावगीत और खेल-खेल
में पहाड़े व आकारों को बनाना सिखाती है।
मैं अपनी कक्षा का होनहार विद्यार्थी हूँ।

नाम- अरून पहाणियाँ
कक्षा - IVth C
केन्द्रिय विद्यालय, रोहिनी सं० 3

बालमन कुछ कहता है

मेरा सपना

मेरा नाम जतिन राजौरा है। मैं IVth कक्षा में पढ़ता हूँ। मेरी हिंदी की किताब रिमझिम है। जिस में कई कविताएँ हैं। जैसे – आँधी, रुन के भोले-भाले बादल, और उलझन हैं। इनमें से मुझे उलझन कविता बहुत पसंद है। लेकिन इसे पढ़कर मुझे अपने जीवन के बारे में सोचने में कोई उलझन नहीं है। मैं बड़ा होकर वैज्ञानिक बनूंगा और अंतरिक्ष में जाऊँगा। और आसमान कि सैर करुंगा। मुझे कल्पना चावला, सुनिता विलियम्स, अच्छे लगते हैं। मैं इनके जैसा बनना चाहता हूँ। मैं एक दीन अपना सपना पूरा करुंगा।

नाम – जतिन राजौरा
कक्षा – IVth – C
केंद्रिय विद्यालय, रोहिणी
सं० – 3C

कविता

अब तो मुझे भी पढ़ने दो!

लक्ष्मी रानी 'चंदेल' *

मेरा ये मासूम बचपन,
न कैद होने दो चार दीवारों में,
न डालो रूढ़िवादी समाज की बेड़ियाँ मेरे पाँवों में,
पढ़ने दो, कुछ करने दो,
अब तो मुझे भी पढ़ने दो.....

बेटी हूँ, अभिशाप न मानो मुझे,
हर क्षेत्र में बेटों से आगे जाने मुझे,
पढ़ने दो, कुछ करने दो,
अब तो मुझे भी पढ़ने दो.....

पढ़-लिखकर आगे बढ़ना है मुझे,
अपने माता-पिता का सपना पूरा करना है मुझे,
आसमाँ की ऊँचाइयों को छूने दो,
पढ़ने दो, कुछ करने दो,
अब तो मुझे भी पढ़ने दो.....

न करो कच्ची उम्र में विवाह मेरा,
पढ़कर सभ्य होने दो जीवन मेरा,
आनेवाली पीढ़ी में ज्ञान का दीप जलाने दो,
पढ़ने दो, कुछ करने दो,
अब तो मुझे भी पढ़ने दो.....

अब नहीं किसी के रहमोकरम पर जीना,
कुछ कर दिखाना चाहती हूँ,
जैसी बनी कल्पना चावला, सानिया मिर्ज़ा, मैं भी बनना चाहती हूँ,
पढ़ने दो, कुछ करने दो,
अब तो मुझे भी पढ़ने दो.....

* कनिष्ठ परियोजना अध्येता, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली